प्रथम संस्करण, १९४८

प्रकाशक—किताब महल, ५६-ए, ज़ीरो रोड, इलाहाबाद ।
मुद्रक—रामशरण अग्रवाल, प्रगति प्रेस, ड्रमण्ड रोड, इलाहाबाद ।

विषय-सूची

परिशिष्ठ

तिब्बतमें बौद्धधर्म

ईसासे पूर्व तीसरी शताब्दीसे ही बौद्धधर्म भारतकी सीमासे बाहर फैलने लगा था। उस वक्त उसके धर्म-दूत न केवल बर्मा और लंकामे बल्कि मेसोपोटामिया, मेसीदोनिया और मिश्र तक पहुँच गए थे। इसी समय मध्य-एशियामे बौद्धधर्म ही नही फैला, बल्कि परपराके अनुसार सम्राट् अशोकका एक पुत्र कूचा आस-पासके और प्रदेशोमे अपना राज्य भी कायम करनेमे सफल हुआ। जनश्रुति तो चीनमे बौद्धधर्मका पहुँचना पहले बतलाती है, किंतु ५६ ई०मे खोतनके काश्यप-मातंग द्वारा किए गए बौद्ध ग्रथोके चीनी अनुवाद तो अब भी प्राप्य हैं। ३७२ ई०में बौद्ध-धर्म कोरियामे, और ५३८ ई०मे जापानमें स्थापित हुआ। हिंदू-चीनमे भी वह ईसाकी तीसरी शताब्दीसे पूर्व पहुॅच चुका था। इस प्रकार जब कि बौद्धधर्म भारतसे दूर-दूर देशोमे इतना पहले पहुॅच चुका था, तो पड़ोसी भोट (तिब्बत) देशमे ६४० ई०से पूर्व वह क्यों न पहुॅच सका ?

वस्तुतः इसका कारण भोट देशकी भौगोलिक स्थिति और बहुत कुछ उसीके कारण सामाजिक विकासकी गतिका मंद होना है। साधारणतः भोट देशमे बस्तियाँ समुद्र तलसे दस हज़ारसे १२ हज़ार फीट ऊपर बसी हुई है। यदि वह कहीं इनसे नीची हैं,

तो अन्यत्र १४ हजार फीटपर भी आप उन्हें देखेंगे। इतनी ऊँचाईपर होनेके कारण एक तो वहाँ सर्दी बहुत पड़ती है और दूसरे वहाँके पहाड़ वृक्ष-वनस्पति-शून्य हैं। इस प्रकार वहाँ जीवन-संघर्ष आरंभसे ही मनुष्यके लिए कुछ कठिन रहा है। लेकिन भोट देशवासियोंने बहुत पहले ही इसको अधिक भीषण न होने देनेके लिए जनसंख्या-निरोधकी औषधि ढूँढ़ निकाली, और सभी भाइयोंकी एक ही पत्नीका नियम बना डाला। अब उतने ही खेत और उतने ही भेड़-बकरियोंके गल्ले उनकी आने वाली संततिके लिए भी काफी होने लगे। वह अपनी वर्त्तमान अवस्थासे सतुष्ट रहने लगे। उस समय उनकी प्रधान जीविका पशु-पालन थी। यदि परंपरा स्वीकार की जाय, तो कृषिका आरंभ (ञ्य-ख्रि) स्पु-ल्दें-गुङ्-र्ग्यल् ❀ (प्रायः ईसवी सन्के आरंभ)के समयमें हुआ। वस्तुतः यदि बाहरकी दुनियाने दुर्गम हिमालयकी घाटियोंको पारकर भोट-वासियोंको बाह्य दुनियाका परिचय न कराया होता, तो कौन जानता है कि तिब्बतमें अभी तक कोई परिवर्त्तन हुआ होता ?

तिब्बतमें बौद्धधर्मके प्रवेशके बारेमें कुछ कहनेसे पूर्व यहाँ तिब्बत देशके बारेमें कुछ कह देना आवश्यक है। तिब्बत देश पूर्वसे पश्चिम तक प्रायः उतना ही लंबा है, जितना कि भारत।

❀डाक्टर ए० एच० फ्राके, "ऐंटिकिटीज अव् इंडियन टिबेट", भाग २, पृष्ठ ७९।

उत्तर-दक्षिण इसकी चौड़ाई छः-सात सौ मील है। इसके चार भाग है—

(१) पश्चिमी तिब्बत—जिसमे लदाख, शङ्-शुङ्* या गूगे (मानसरोवर और लदाखके बीचका प्रदेश), और सपु-रङ्स् (मानसरोवरसे पूर्व ग्चङ् तकका प्रदेश) है।

(२) मध्य तिब्बत—अर्थात् ग्चङ् (नेपाल, सपुरङ्स्, द्बुस्, ल्होख और ब्यङ्-थङ्से घिरा प्रदेश, जिसमे ऽफ्रग्-रि, ब्क्र-शिस्-ल्हुन्-पो, ग्नम् और स्क्यिद्-रोङ्की बस्तियाँ हैं), द्बुस (द्बुस् छु नदीकी उपत्यकाका प्रदेश, जिसमे द्गऽ-ल्दन, ल्ह-स, छु-शल् आदिकी बस्तियाँ हैं), ल्होख (छु-शल्से नीचे ब्रह्मपुत्रका तटवर्ती प्रदेश, जिसके निचले भागमे कोङ्-पो प्रदेश है), और कोङ्-पो (पूर्व-वाहिनी ब्रह्मपुत्रका अंतिम और उष्ण-तम भाग, जो कि भोटके राजवंशका ही मूल-स्थान न था, बल्कि

---

*भोट-भाषाके शब्दोके उच्चारणमें इन नियमोंका ध्यान रखने-पर वह मध्य भोटके उच्चारणके अनुसार हो जायगा।

(१) जितने अक्षर-समूहमें केवल एक स्वर उच्चारित होता है, उसे एक विभाजक रेखासे अलग किया गया है, जैसे—ब्क्र-शिस् (=ट-शि)।

(२) स्वर-युक्तवर्णोंके पीछेके स्वरहीन द्, ल्, स्, उच्चारित नहीं होते, सिर्फ़ उनके पूर्व वाले अ, उ, ओ स्वर विकृत हो अं, उं और ओं (जर्मन ä, ü और ö) बन जाते हैं।

वर्त्तमान दलाई लामा और टशी लामाकी भी जन्मभूमि है। यही यर्-लुङ् वस्ती है, जहाँ स्रोङ्-ब्चन्-स्गम्-पोके पूर्वज रहा करते थे)।

(३) पूर्वीय तिब्बत—अर्थात्, खम्स् (पूर्वमे चीनके युन्-नन् और से चु-आन् प्रांतो तक फैला प्रदेश, जिसमे छब्-म्दो और ब्दे-र्ग्येस्के मशहूर मठ स्थापित हुए), अम्-दो (खम्स्के उत्तरमे चीन-से मध्य-एशियाके वणिक्-पथके पास तक फैला प्रदेश, जिसमे ब्क्र-शिस्-ख्यिल्, चो-नस्, स्कु-ऽवुम्के प्रसिद्ध मठ स्थापित हुए। महान् सुधारक चोङ्-ख-प भी यहींकी चोङ्-ख वस्तीमे उत्पन्न हुआ था; कोकोनोरका महान् सरोवर और मंगोलोंकी युगुर् जाति यही वसती है) और गङ् (खम्स्से दक्षिणमें)।

(४) ब्यङ्-थङ्—(चङ्-थङ्), यह वह अतिशीतल मैदान है, जो मध्य और पश्चिमीय तिब्बतसे चीनी तुर्किस्तान तक फैला हुआ है।

---

(३) सभी स्वर ह्रस्व लिखे जाते हैं। आमतौरसे उनका उच्चारण डेढ मात्राके बराबर होता है, किंतु दीर्घ और प्लुत उच्चारण भी होते हैं।

(४) जिन वर्णोंके नीचे हलतका चिह्न (्) लगा है, उनके उच्चा-रण नहीं करने चाहिए, विशेषकर यदि वह स्वरयुक्त वर्णके पूर्व हों।

(५) सयुक्त वर्णोंका उच्चारण होना चाहिए, हाँ यह ध्यान रखना चाहिए, कि—

क्र, त्र, प्र = ट, ख्र, फ्र = ठ, ग्र, द्र, ब्र = ड

(६) भोट वर्णमालाके कुछ अक्षरोंके मैंने इस प्रकार सकेत रक्खे हैं—च (Ts), छ (Tsh), ज़ (Dz), श (Zh), स (Z), ऽ(h या'a)

१—आरंभ-युग (६४०-८२३ ई०)

स्रोङ्-गचन्-गसम्-पोके जन्म (६१७ ई०)से पूर्व भोट देश छोटी-छोटी सर्दारियोमे बॅटा था। स्रोङ्-ब्चन्का जन्म मध्य तिब्बतके उष्णतम प्रदेश कोङ्-पोमे हुआ था। कृषिके साथ सभ्यताका भी आरभ इसी प्रदेशमे होना स्वाभाविक था। परम्परा तो बतलाती है, कि स्रोङ्-ब्चन्का प्रथम पूर्वज कोसल-राज प्रसेनजित् (ई० पू० पाँचवी-छठी शताब्दी)का पुत्र था। जो भी हो, इसमे तो शक नहीं कि स्रोङ्-ब्चन्का वश और उसका प्रदेश अधिक उन्नतावस्थामें था। यह प्रदेश औरोकी अपेक्षा अधिक घना भी बसा था। बाहरके राजाओ और सम्राटोकी शान-व-शौकतकी कथायें यहाँ पहुॅच चुकी थीं। बाप-के मरनेके वाद तेरह वर्षकी अवस्थामें ही स्रोङ्-ब्चन् अपने छोटे राज्यका स्वामी बना। किंतु वह उतनेपर सतुष्ट रहने वाला कब था? अपने समकालीन सम्राट् हर्षबर्धनकी भाँति उसे भी दिग्विजयकी सूझी। निडर और कष्ट सहनमें पटु अपने भोट योद्धाओको सगठितकर उसने एक सुदृढ़ सेना बनाई, और द्बुस् (मध्य) और ग्चङ्के प्रदेशोको अपने अधिकार-मेंकर, उत्तरोत्तर बढ़ते हुए अपने सैन्यबल द्वारा उसने पश्चिममें गिल्गित, उत्तरमे चीनी तुर्किस्तान तकको ही नही जीत लिया, बल्कि नेपालके राजा तथा चीनके सम्राट्को भी कुछ प्रदेशों-के साथ अपनी कन्यायें देनेपर बाध्य किया। इस प्रकार विजयी

भोट देशका सभ्य दुनियामे प्रवेश हुआ। स्रोङ्-ब्चन् सारे भोट और पार्श्ववर्ती प्रदेशोका सम्राट् बना।

इस विशाल साम्राज्यके संचालनके लिए उसे कई बातें करनी पड़ीं, जिसमे पहिली बात थी राजधानीको ब्रह्मपुत्र उपत्यकासे हटाकर उसके लिए द्बुस्-छु नदीके तटपर ल्ह-स (ल्हासा) नगरका निर्माण करना। इसके पूर्व जो र(वं)-स (अज-भूमि) था, वह अब ल्ह-स (देवभूमि) हो गया। ६४० ई०में नेपालाधिपति अंशुवर्माकी कन्या ख्रि-चुन् सम्राट्के विवाहार्थ ल्हासा पहुँची। दूसरे वर्ष चीन-राजकन्या कोङ्-जो भी राजामात्य म्गर्के साथ ल्हासा आई। इससे पूर्व ही सम्राट्ने यह अनुभव किया था, कि इतने बड़े राज्यका संचालन एक लिपिके बिना सुकर नहीं। इसीलिए वह थोन्-मि (थोन्-गाँव-निवासी) अनुके पुत्रको सोलह साथियों*के साथ भारतमें विद्याध्ययनके लिए भेज चुका था। नेपाल-राज-कन्या थोन्-मिके साथ ही ल्हासा पहुँची।

नेपाल-राजकुमारी अपने साथ अक्षोभ्य, मैत्रेय और चदन-की ताराकी मूर्त्तियाँ ले आई। उधर चीन-राजकन्याने एक पुरातन बुद्ध-प्रतिमा—जो किसी समय भारतसे मध्य-एशिया और वहाँसे चीन पहुँची थी—दहेजमे पाई। चीन-कुमारी रानी कोङ्-जो हुई। उसने अपनी प्रतिमाको प्रतिष्ठित करनेके लिए

---

*ओबरमिलर, 'बु-स्तोन्' भाग २, पृ० १४३

ल्हासा नगरके उत्तरी भागमें र-मो-छेका मंदिर बनवाया। नेपाल-कुमारी रानी ख्रि-चुनके पास इतना धन न था, कि वह अपनी मूर्तियोंके लिए मंदिर बनवाती। सम्राट् स्रोङ्-ब्चन्को जब यह मालूम हुआ, तो उसने एक जलाशय पटवाकर, ल्हासा नगरके मध्यमें ऽख्रु-ल्-स्नङ्का सुंदर मंदिर बनवाया, जिसे आज-कल भट्टारक (स्वामि)-गृह कहते हैं।

थोन्-मिने राजाके आदेशानुसार भोट-भाषा लिखनेके लिए एक लिपि बनाई जो कश्मीरकी उस समयकी लिपिके समान थी। भोट-भाषामें उतने स्वरोंकी आवश्यकता न थी, इसलिए उसने अको छोड़ इ-उ-ए-ओ यह चार स्वर बनाए। अको लेकर व्यंजनों की संख्या तीस की। वर्गोंके चतुर्थ अक्षर (घ, झ इत्यादि) और मूर्धन्य ष अनावश्यक होनेके कारण छोड़ दिए गए। साथ ही विशेष उच्चारणके लिए च़, छ़, ज़, श़, स़, ऽ— इन छः नए अक्षरोंका निर्माण करना पड़ा। थोन्-मिने स्वयं भोट-भाषाका प्रथम व्याकरण बनाया। स्रोङ्-ब्चन्ने लिपि और व्याकरण आदिके सीखनेके लिए अपना चार वर्षका समय दिया। ल्हासाके लोह-पर्वत (ल्चग्स्-रि)में उत्कीर्ण वह गुफा आज भी दिखलाई जाती है, जिसमें रहकर स्रोङ्-ब्चन् चार वर्ष तक इस नई लिपि और व्याकरणका अभ्यास करता रहा।

कहते हैं, मिट्टीके बर्तन, पनचक्की और करघेका प्रचार भी इसी सम्राट्के समयमें हुआ। जो भी हो, इसमें तो शक नहीं,

कि सम्राट् स्रोङ-्व्चन् तिब्बतका एक सुशासक ही न था, बल्कि वह भोट देशके आनेवाले साहित्य, धर्म, राजनीति आदि सभी-का निर्माता था। अपनी दोनों बौद्ध रानियो और अमात्य थोन्-मिके प्रभावसे वह बौद्ध हुआ। बौद्धधर्मने अब एक अशिक्षित जातिको सुसस्कृत बनानेका अवसर पाया। कला-कौशल, आचार-व्यवहार, शिक्षण-अध्ययन सभीके लिए चीनी और भारतीय बौद्ध विद्वानोंको खुला अवसर मिला। उन्होने बड़ी उदारतासे काम लिया। यह कोशिश न की, कि इस अशिक्षित जातिके (जिसका न कोई पुराना साहित्य था, न जिसकी कोई उन्नत सस्कृति थी) व्यक्तित्वको मिटाकर उसे भारतीय या चीनी बनानेकी कोशिश करते। उन्होने बहुत-सी बातें भोट जातिको दीं, किंतु सबका भोटी-करण करके। बौद्ध-धर्मग्रथोके अनुवाद करनेके लिए भारतीय पंडित कुसर (या कुमार), नेपाली शीलमजु, कश्मीरी तुन, चीनी भिक्षु महादेव, तथा थोन्-मि और उसके शिष्य धर्मकोश एवं ल्ह-लुङ्-छोस्-र्जे-द्पल् नियुक्त हुए। थोन्-मिकी आठ पुस्तकोमेसे अब कुछ ही बाक़ी हैं। शेष पुराने अनुवाद नही मिलते। कारण, यह है कि आरंभके अनुवाद उतने अच्छे नहीं थे, इसलिए पीछेके सुदर अनुवादोके सामने उनका प्रचार नही हो सका। कहा जाता है, थोन्-मिने 'करंडव्यूहसूत्र', 'रत्नमेघ-सूत्र' और 'कर्मशतक' के अनुवाद किए थे। चीनी आचार्योंने विशेषतः गणित और वैद्यककी पुस्तकोंके अनुवाद किये। इस काममें भारत, ली (चीनी तुर्किस्तान) और चीन

तीनो देशोके बौद्ध विद्वानोने सहयोग दिया था। ली देशके दो भिक्षुओने सम्राट्‌की जीवनी भी लिखी थी।

बासठ वर्षके सुदीर्घ और प्रशांत शासनके बाद ६९८ ई०में ८२ वर्षकी अवस्थामे सम्राट् स्रोङ्-ब्चन्‌ने ल्हासाके उत्तरवाले फन्-युल प्रदेशके सल्-मी स्थानमे अपना शरीर छोड़ा। उसकी मृत्युके बाद सम्राज्ञी कोङ्-जोकी आज्ञासे चीनसे आई बुद्ध-मूर्त्ति भी ऽख्रुल्-स्नङ्से लाकर स्थापित की गई, और आज तक वही है।

सम्राट् मङ्-स्रोङ्-मङ्-ब्चन् (६९८-७१२ ई०)—सम्राट् स्रोङ्-ब्चन्‌को, नेपाली रानी ख्रि-चुन्‌से एक कुमार गुङ्-स्रोङ-गङ्-ब्चन् पैदा हुआ था, किंतु वह पिताके जीवन हीमे जाता रहा। पिताके मरनेपर चीनी रानीका पुत्र मङ्-स्रोङ्-मङ्-ब्चन् पंद्रह वर्षकी अवस्थामे सिंहासनपर बैठा। पिताके महान् व्यक्तित्वने इसके कामको यद्यपि ढाँक लिया, तो भी एक बार इसे अपना पराक्रम दिखानेका अवसर मिला। स्रोङ्-ब्चन्‌की मृत्युके बाद, (यद्यपि नया सम्राट् चीन-राजकन्याका पुत्र था, तो भी) चीनियोने भोटकी शक्तिको निर्बल समझ उनसे युद्ध छेड़ा, किंतु चीनियोको हारना पड़ा। धार्मिक बातोमे इस सम्राट्‌ने तथा इसके पुत्र दुर्-स्रोङ् (७१२-३० ई०)ने अपने पूर्वजका अनुसरण किया। दुर्-स्रोङ्‌ने चीन-सम्राट्‌की कन्या वुन्-शिङ्-कोङ्से ब्याह किया था।

ख्रि-ल्दे-ग्चुग्-ब्र्तन् (७३०-८०२ ई०)—अपने पिता दुर्-स्रोङ्

के बाद राजगद्दीपर बैठा। इस बार भी चीनने अपने खोए हुए प्रदेशोंको छीनना चाहा। गिल्गितके लिए एक खासी लड़ाई छिड़ गई। अबकी बार भी चीनको हारना पड़ा। चीन-सम्राट्ने अपनी कन्या चिन-चेङ् (या ग्यिम-क्य)को भोट-युवराज ल्जङ्-छ्-ल-ब्र्पोनके लिए प्रदान किया। जिस वक्त राजकुमार अपनी भावी पत्नीसे मिलने जा रहा था, उसी समय किसी आकस्मिक घटना-वश उसका शरीरांत हो गया। अंतमें राजकुमारीका सम्राट् ग्चुग-ब्र्तन्के साथ ब्याह हुआ। इस ब्याहके दहेजसे भोटराजको ह्वाङ्-हो नदी तटवर्ती चिन्-चु और कु-ए-इ प्रदेश मिले। (ब्लन्-क) मूलकोष और (ङग्) ज्ञानकुमारने उस समय कुछ बौद्धग्रंथोंके अनुवाद किए, जिनमें 'सुवर्ण-प्रभासोत्तम सूत्र' मुख्य था।

२—शांतरक्षित-युग (८२३-१०४२ ई०)

ख्रि-स्रोङ-ल्दे-ब्र्चन् (८०२-४५ ई०)—सम्राट् ख्रि-ल्दे-ग्चुग-ब्र्तन्को चीन-राजकुमारीसे लोह-अश्व वर्ष (७९० ई०)में व्सम्-यस्के पास एक पुत्र हुआ। यही आगे चलकर भोट-देशका अशोक बना। अभी यह तेरह वर्षका ही था कि इसके पिताका देहांत हो गया, और महान स्रोङ्-ब्र्चन्की भाँति, किंतु उससे कहीं अधिक विशाल साम्राज्यका वह उत्तराधिकारी हुआ। स्रोङ्-ब्र्चन्के समयसे अब इन पौने दो सौ वर्षोंमें बहुत फर्क पड़ गया था। सारे भोट देशमें संस्कृतिका एक नया प्रवाह उमड़

आया था। राजवंश अब रक्तमे अधिकतर चीनी था, क्योंकि अब तकके प्रायः सभी सम्राट् चीन-राजकन्याओंसे ब्याह करते आए थे, तो भी वह भावमे पूरे भोटदेशीय बने रहे। हाँ, दर्बारमे चीनी विद्वानोका भी प्रभाव था, विशेषकर धर्माचार्य तो कितने ही चीन-देशीय थे।

स्रोङ्-ब्चन्के समय (६४० ई०)में बौद्धधर्मके प्रवेशसे पूर्व भी भोटमे एक प्रकारका धर्म प्रचलित था, जो अधिकतर भूत-प्रेतकी पूजापर निर्भर था, जिसे कि बोन्-धर्म कहते हैं। यद्यपि बौद्धधर्मने बहुत उदारता दिखलाई (जहाँ तक कि उनके कितने ही पूजा-प्रकारोसे सबंध था) तो भी दोनो धर्मोंमे प्रधानताके लिए सघर्ष जारी रहा। खि-स्रोङ्-ल्दे-ब्चन्के बाल्य-कालमे बौद्ध-विरोधी मंत्रियोका इतना प्राबल्य हो गया, कि उन्होने ख्रुल्-स्नङ्से पहले तो बुद्ध-मूर्त्तिको हटाकर चीन भेजना चाहा, किंतु पीछे उसे जमीनके भीतर गाड़ दिया, और मंदिरको कसाईखानेके रूपमे परिणत कर दिया। उसी समय दो एक मंत्रियोपर कुछ आकस्मिक आपत्तियाँ पड़ी, जिससे डरकर उन्होने मूर्त्ति नेपालकी सीमाके समीप वाले मङ्-युल् प्रदेशके स्क्यिद्-रोङ् स्थानमे भेज दी।

तरुण सम्राट्को पढते समय अपने पूर्वजोके चरित्रोको पढनेका भी अवसर मिला। उस समय उसे अपने पूर्वजोकी बौद्धधर्मपर अपार श्रद्धाका पता लगा। उसने छिपाए हुए ग्रन्थोकी खोज कराकर उन्हे चुपचाप पढ़ना शुरू किया, और

अंतमें उसको भी पूर्वजों जैसी ही बौद्धधर्मपर आस्था हो गई। उसने दो चीनी विद्वानोंसे और गो तथा कश्मीरी पंडित अनंत-को धर्म-ग्रन्थोंके अनुवादके काममें लगाया। किंतु बोन्-धर्मी मंत्रियोंके विरोधके कारण उन्हें मङ्-युल् भेज देना पड़ा। पंडित अनंत और चीनी विद्वान् तो मङ्-युल् हीमें ठहरे, जहाँ-का तत्कालीन प्रांताधिपति बौद्ध था; किंतु ग्सल्-स्नङ्—जो कि आगे चलकर ये-शेस्-दूबङ्-पो (ज्ञानेंद्र)के नामसे प्रसिद्ध हुआ—वहाँसे भारत चला गया। महाबोधि (बोधगया)के दर्शनके बाद वह नालंदा पहुँचा। वहाँ उसने आचार्य शांत-रक्षितके बारेमें सुना। किंतु आचार्य उस समय वहाँ न थे। नेपाल पहुँचनेपर सौभाग्यसे उसे आचार्यका दर्शन हुआ। ज्ञानेंद्रके आग्रहपर आचार्य मङ्-युल् पधारे। कुछ दिनों वहाँ रहकर वह फिर नेपाल लौट गए। हाँ, यह याद रखना चाहिए, कि उस समय मध्यभारत (युक्त-प्रांत, बिहार)से तिब्बत जाने-का प्रधान रास्ता नेपाल और स्क्यिद्-रोङ् (मङ्-युल्) होकर ही था। ज्ञानेंद्रको आचार्य शांतरक्षितके सत्संगसे बहुत लाभ हुआ।

इस सम्राट्के समयमें भी चीनने भोटकी तलवारसे परीक्षा ली। भोट सेना विजयी हुई। इस विजयकी कथा उसी समय एक पाषाण-स्तंभपर लिखी गई, जो अब भी ल्हासामें पोतलाके नीचे मौजूद है।

अब ज्ञानेंद्र मङ्-युल्से ल्हासा गया। सम्राट्से धर्म-चर्चा

हुई। सम्राट् और कितने ही अमात्य बौद्धधर्मको फिर उसके पूर्व-स्थानपर प्रतिष्ठित करना चाहते थे, किंतु बलशाली मंत्री मा-शङ् ख्रोम्-प-स्क्येद्‌के सामने किसीकी हिम्मत नही पड़ती थी। अंतमे सम्राट् और अन्य अमात्योंकी रायसे मा-शङ् जीवित ही दफ़न कर दिया गया, और इस प्रकार बोन्-धर्मकी शक्ति हमेशाके लिए क्षीण हो गई। अब सम्राट्‌की आज्ञासे ज्ञानेंद्र आचार्य शांतरक्षितको बुलाने गया। आचार्यके लिए सबसे बडी दिक्कत भाषा की थी; किंतु कश्मीरी पंडित अनंत बहुत वर्षों तक तिब्बतमें रहनेके कारण भोट-भाषाका अच्छा ज्ञान रखने थे। आचार्य संस्कृतमे बोलते थे, और वह उसका उल्था कर दिया करते थे। कहनेकी आवश्यकता नही कि भोट-सम्राट्‌ने नालंदाके इस अद्भुत विद्वान्‌का ख़ूब सन्मान किया। ल्हासा पहुँचकर चार मास तक आचार्य राजमहलमे दश कुशल (शुभकर्म), अठारह धातु और द्वादशांग प्रतीत्यसमुत्पाद पर व्याख्यान देते रहे। सम्राट् उनका बड़ा ही अनुरक्त शिष्य हो गया। इसी समय नदीकी बाढ़से फङ्-थङ् स्थान बह गया, लोहितगिरि (मर-पो-रि)पर बिजली गिरी, और देशमे ढोरोंकी बीमारी फैल गई। लोगोने शोर किया, कि यह आचार्यके उपदेशसे रुष्ट हुए तिब्बतके देवताओंके प्रकोपका फल है। लाचार इच्छा न रहते हुए भी सम्राट् आचार्यको कुछ दिनोंके लिए वापस भेजनेपर मजबूर हुए।

कितने ही समयके बाद सम्राट्‌ने ज्ञानेंद्रको धर्म-ग्रन्थोके

संस्कृतके लिए चीन, और सङ्-शि (चीन)-भिक्षुको तीन साथियों-के साथ आचार्य शांतरक्षितको बुलानेके लिए भारत भेजा। ज्ञानेंद्रके चीनसे लौटनेपर भी जब आचार्य नहीं आए, तो सम्राट्ने ज्ञानेंद्रको भी रवाना किया। आचार्य शांतरक्षित ७५ वर्षकी बुढ़ापेकी अवस्थामें भी धर्म-प्रचारके उत्तम अवसरको हाथसे कब छोड़ने वाले थे। वह फिर तिब्बत पहुँचे। ब्रह्मपुत्र-की उपत्यकाके ब्सम-यस् (सम-ये) मे उनका निवास कराया गया।

यद्यपि बौद्धधर्मका तिब्बतमें प्रवेश प्राय दो सौ वर्ष पूर्व हुआ था किंतु अब तक न कोई भोट-देशीय भिक्षु बना था, और न वहाँ कोई मठ ही स्थापित हुआ था। राजाकी इच्छानुसार आचार्यने ब्रह्मपुत्रसे प्रायः दो मील उत्तर एक भूमि मठके निर्माणके लिए चुनी। यहीं मगधेश्वर महाराज धर्मपाल (७६९-८०९ ई०)*के बनवाये उड्यंतपुरी (विहार-शरीफ) महाविहार-के नमूनेपर बसम्-यस् विहारकी नीव डाली गई। विहारका आरंभ ८२३ ई०†मे हुआ, और समाप्ति ८३५ ई०मे। मठके मध्यमे सुमेरुकी भाँति प्रधान विहार (मंदिर) बनाया गया, और चारो तरफ़ चार महाद्वीप और आठ उपद्वीपोंकी भाँति भिक्षुओंके रहनेके लिए बारह ग्लिङ् (द्वीप) बनाए गए। इनमें

---

* अध्यापक दिनेशचन्द्र भट्टाचार्यकी रायमे ७४४-८०० ई०

† जलशश (७६३ ई०)की जगहपर अग्नि-शश गलतीसे लिखा मालूम होता है

दस निम्न हैं—(१) खम्स्-ग्सुम्-खङ्-ग्लिङ्, (२) ब्दुद्-ऽदुल्-स्ङग्-प-ग्लिङ्, (३) नंम्-दग्-ख्रिमस्-खङ्-ग्लिङ्, (४) द्गे-ग्र्यस्-ञ्ये-म-ग्लिङ, (५) ऽछल्-ग्सेर्-खङ्-ग्लिङ, (६) मि-ग्यो-ब्सम्-ग्तन्-ग्लिङ्, (७) ब्दे-स्ब्योर्-छङ्स्-पऽि-ग्लिङ्, (८) द्कोर्-म्जोद्-पे-हर्-ग्लिङ्, (९) ज़म्-ग्लिङ्, (१०) ग्र्य-गर्-ग्लिङ्। दोके नामोका पता नही। प्रधान विहारके चारो कोनो पर, कुछ हटकर, पक्की ईंटोके लाल नीले आदि रंगो वाले चार सुदर स्तूप बनवाए गए। चक्रवालकी भाँति एक ऊँचे प्राकारसे सारा मठ घेर दिया गया और चारो दिशाओमे प्रवेशके लिए चार फाटक लगाए गए। इस विहारके बनानेमें बारह वर्ष लगे। जिस समय विहार तैयार हुआ होगा, उस समय यह अद्भुत चीज़ रही होगी, लेकिन दुर्भाग्यवश, बारहवीं शताब्दीके आरभमें किसी असावधानीके कारण उसमे आग लग गई, जिससे अधिकांश मकान जल गए। फिर र (र्व)-लो-च्-व-र्दो-र्जे-ग्रग्स्ने उसी शताब्दीमे इसका पुनर्निर्माण कराया। यह मठ पहाड़की भुजापर न हो तिब्बतके अन्य पुराने मठो—श-लु (स्थापित १०४० ई०), स्नर्-थङ् (स्थापित ११५३ ई०) आदि—की भाँति अथवा मध्य-भारतके पुराने मठोकी भाँति, समतल भूमिपर बना है।

विहार-निर्माण आरभ करनेके समय ही राजाकी इच्छा हुई, कि भोट-देशीय पुरुष भिक्षु-दीक्षासे दीक्षित किए जावें। विहारका कुछ काम हो जानेपर आचार्यने नालंदासे सर्वा-

मिनागी भिक्षुओंको बुलवाया। भिक्षु-नियमके अनुसार भिक्षु बनाना संघका काम है, कोई एक व्यक्ति भिक्षु नहीं बना सकता। यद्यपि मध्य-भारत (युक्त-प्रांत, विहार)से बाहर पाँच भिक्षु भी होनेसे कोरम पूरा हो जाता है, तो भी आचार्यने बारह भिक्षु बुलाए, और मेष-वर्ष (८१७ ई०)में—(१) ज्ञानेंद्र, (२) द्पल्-द्ब्यङ्स्, (३) (ग्चङ्) शीलेंद्र-रक्षित, (४) (र्म) रिन-छेन-मछोग्, (५) (ङ्खोन्) क्लुइ-द्बङ्-पो, (६) (ग्चङ्) देवेंद्ररक्षित, (७) (प-गोर्) वैरोचनरक्षित—यह सात भोट देशीय कुल-पुत्र भिक्षु बनाए गए।

भिक्षु-संघ और भिक्षु-विहार स्थापितकर आचार्य शांतरक्षित-ने भोट देशमें बौद्धधर्मकी नींव दृढ़ कर दी। यहाँ एक और व्यक्तिके विषयमें कुछ लिख देना आवश्यक है। तिब्बतके पुरातन भिक्षुओं द्वारा स्थापित परंपरावाले आज-कल ञिङ्-म-प (प्राचीनक) कहे जाते हैं। यद्यपि यह लोग आचार्य शांतरक्षित-को भी अपना नेता मानते हैं, तो भी अधिक श्रेय एक रहस्यपूर्ण व्यक्ति पद्मसंभवको देते हैं। इसका कारण, उनकी वास्तविकताकी अपेक्षा जादू तथा मंत्रमें असाधारण अनुराग है। अधिकसे अधिक यही कहा जा सकता है, कि पद्मसंभव शांतरक्षितके अनुगामी भिक्षुओंमें एक, साधारण भिक्षु था। स्तन्-ग्युरमें इसकी भिक्षु-नियम-संबंधी कुछ छोटी पुस्तकें भी मिलती हैं। पद्मसंभव राजा इंद्रभूति (इंद्रबोधि)का पुत्र कहा जाता है, किंतु भारतीय परंपरा, इंद्रभूतिको चौरासी सिद्धोंमें मानती

हुई भी, उसके पुत्र पद्मसंभवके बारेमे कुछ नहीं जानती। इंद्र-भूति आदि-सिद्ध सरह (७५० ई०)के बाद हुआ था, फिर उसके पुत्रका ब्सम्-यस् बननेके समय तिब्बत पहुँचना भी संभव नही। सब बातोपर विचार करनेसे ज्ञात होता है, कि एक साधारण भिक्षु पद्मसंभवको आसमानपर चढ़ानेके लिए, पीछे-के र्ञिङ्-म-प सम्प्रदाय वालोने तरह-तरहकी अद्भुत कहानियाँ गढ़ी; और इसके लिए मूल-संस्थापक आचार्य शांतरक्षित तो पीछे डाल दिये गए, और *पद्मसंभवकी तिब्बतमे बुद्धसे भी अधिक पूजा होने लगी।

अन्य कार्योंसे निवृत्त हो आचार्यने बौद्धग्रंथोंके अनुवादकी ओर ध्यान दिया। अभी तक अनुवादोंका कोई पक्का निर्धारित नियम नही बना था। इसीलिए मालूम होता है, इस समयके बहुतसे अनुवाद पीछे अग्राह्य हो गये। आचार्य शांतरक्षितके अनुवाद किये ग्रन्थोमे दिङ्नाग-विरचित 'हेतुचक्र' भी है जिसे उन्होने लो-च-व धर्मकोषकी सहायतासे अनुवादित किया था।

सौ वर्षकी आयुमे (प्रायः ८४० ई०के क़रीब) घोड़ेके पैर-की चोटसे आचार्यका देहांत हो गया। विहारके पूर्वकी छोटी पहाड़ीपर उनका शरीर एक स्तूपमें रक्खा गया। साढ़े ग्यारह

---

* जैसे महायानने पालि-सूत्रोंके अल्प प्रसिद्ध सुभूतिको सारी प्रज्ञापारमिताओंका उपदेष्टा बनाकर उसे सारिपुत्र और मौद्गल्यायनसे भी अधिक महत्त्वशाली बना डाला वैसे ही र्ञिङ्-प वालोंने पद्मसम्भवके लिए किया।

सौ वर्ष तक, मानो वह उसी पहाड़ी टेकरीपरसे अपने कार्य-की देख-रेख कर रहे थे। ३०-३५ वर्ष हुए वह जीर्ण-शीर्ण स्तूप गिर पड़ा, और आचार्यका अस्थिमय शरीर नीचे गिर गया। वहाँसे जमाकर आचार्य शांतरक्षितका कपाल और कुछ हड्डियाँ इस समय प्रधान मंदिरमें शीशेके अंदर रक्खी गई हैं।

आचार्य शांतरक्षित असाधारण दार्शनिक थे, इसका हाल होसे, संस्कृतमे प्रकाशित उनके दार्शनिक ग्रंथ *'तत्त्वसंग्रह'से पता लगता है। वह अपने समयके बौद्ध, ब्राह्मण, जैन सभी दर्शनोके प्रगाढ़ विद्वान् थे। ऐसे विद्वान्‌की देशमे भी प्रतिष्ठा कम न थी, किंतु यह वह समय था, जब कि भारतसे साहस-मय जीवन नष्ट न हुआ था। देशमे प्राप्त सम्मानका ख्याल छोड़ ७५ वर्षकी उम्रमे हिमालयकी दुर्गम घाटियोको पार करनेको वह तैयार हो गए, जब उन्होने देखा, कि इस प्रकार वह अपने धर्मकी सेवा कर सकते हैं। इस त्यागके लिए ही उनका नाम बोधिसत्व पड़ा, और आज भी तिब्बतमे अधिकांश लोग उन्हे आचार्य शांतरक्षितकी जगह मूखन्-छेन् (महापंडित) बोधिसत्वके नामसे ही ज्यादा जानते हैं।

आचार्य शांतरक्षितके बाद उनके शिष्य द्पल्-द्ब्यङ्स् (श्रीघोष) संघ-नायक बने। स्रोङ्-ब्चन्‌के कालसे ही भोट-

---

* धर्मकीर्तिके 'वादन्याय'पर आपकी एक विस्तृत टीका राहुलजी-को मिली थी जो मूल ग्रन्थके साथ प्रकाशित हो चुकी है। इस टीकासे भी पता चलता है कि शान्तरक्षितका पाडित्य कितना अगाध था।

मे चीनी बौद्ध विद्वानोकी प्रधानता थी, यद्यपि कभी-कभी कुछ भारतीय विद्वान् भिक्षु भी वहाँ पहुँच जाते थे। सम्राट् ख्रि-स्रोङ्-ल्दे-बृचन्की गंभीर ज्ञानपिपासाने उन्हे बौद्धधर्मके मूल-स्रोत भारतवर्षकी ओर आकृष्ट किया। आचार्य शांतरक्षितके पहुँचनेके बाद तो अब भारतीय भिक्षुओकी प्रधानता हो गई। किंतु, आचार्यके देहांतके बाद महत्त्वाकांक्षी चीनी भिक्षुओने विवाद खड़ा किया, और वह भी एक सिद्धांतकी आड़मे। उन्होने उपदेश देना शुरू किया कि सारे कर्मोंको छोड़कर परम निष्कर्मण्यताका आश्रय लेना ही बुद्ध-पदकी प्राप्तिका एक मात्र साधन है। श्रीघोष इसके विरुद्ध, यथार्थ सिद्धांतका प्रतिपादन करते रहे। धीरे-धीरे स्तोन्-मुन्-प (अकर्मण्यतावादी या सद्योवादी) सम्प्रदायका जोर बढ़ने लगा, और शांतरक्षितके अनुयायी चेन्-मिन्-प (कर्मण्यतावादी, या क्रमिकवादी)का बल घटने लगा। इस झगड़ेसे घबड़ाकर ज्ञानेंद्र बूसम्-यस् छोड़ दक्षिण ल्हो-ब्रग्मे ध्यान और एकांत-चिंतनके लिए चले गए। जब राजाने कहा, कि सिद्धांत और आचार्य दोनोमे सबको आचार्य बोधिसत्वके सिद्धांतको मानना चाहिए, तो अकर्मण्यता-वादी दलने कर्मण्यता-वादियोको मार डालनेकी धमकी देनी शुरू की। अंतमे इस झगड़ेको मिटानेका उपाय जाननेके लिए राजाने ज्ञानेंद्रके पास आदमी भेजा। दो बार ज्ञानेंद्रने आनेसे इन्कार कर दिया; किंतु तीसरी बार वह राजाके पास आए। राजाके पूछनेपर

उन्होने बताया कि हमारे आचार्यने कहा था, कि यदि कोई विवाद खड़ा हो, तो हमारे शिष्य कमलशीलको बुलाना। अपने गुरुकी भाँति आचार्य कमलशील भी नालदाके एक महान् विद्वान् थे। शांतरक्षितके ५००० श्लोकोके दार्शनिक ग्रंथ 'तत्त्व-संग्रह'पर इन्होने एक विद्वत्तापूर्ण पंचिका लिखी है। यह दोनो ग्रन्थ बड़ोदाकी गायकवाड़-ओरियंटल-सीरीज़मे छप चुके हैं।

अकर्मण्यता-वादियोके नेता चीनी भिक्षु ह्व-शङ्को जब पता लगा, तो उसने अपने पक्षके प्रमाणमें 'ध्यान-स्वप्न-चक्र' नामक ग्रंथ लिखकर, महायान सूत्रोसे बहुतसे प्रमाण जमा कर डाले। इसने अपने शिष्योंको भी इस बड़े शास्त्रार्थके लिए तैयार कर लिया। आचार्य कमलशीलके पहुँचनेपर, शास्त्रार्थ का समय नियत हुआ। सम्राट्ने स्वयं मध्यस्थका आसन ग्रहण किया। दाहिनी ओर अकर्मण्यतावादी और उनके नेता ह्वशङ् (भिक्षु)❀ बैठे, बाईं ओर आचार्य कमलशील, ज्ञानेंद्र, श्रीघोष और दूसरे लोग। सम्राट्ने दोनो पक्षोके मुखियोके हाथमें फूलकी मालाएँ दे दी, और कहा, जो हारे वह विजेताको माला दे और यहाँसे हमेशाके लिए चला जावे। ह्वशङ्ने पहले अपने पक्षके समर्थनमे भाषण दिया, जिसका उत्तर आचार्य कमलशीलने दिया। इसके कहनेकी आवश्यकता नही, कि शास्त्रार्थमें दुभाषियासे काम लिया जाता था।

❀ह्वशङ् यह चीनी शब्द है, जिसका अर्थ भिक्षु है। इस ह्वशङ्का असली नाम मालूम नहीं।

अकर्मण्यतावादियोंकी अंतमे पराजय हुई। वह आचार्यके हाथमें माला देकर देशसे निकल गए।

पीछे ह्वशङ्ने धन-लोभ देकर चार चीनी क़साइयोंको भेजा, जिन्होने आचार्य कमलशीलको मार डाला। ज्ञानेंद्रने भी शोकाक्रांत हो निराहारसे प्राण त्याग दिए, और सम्राट् भी ६९ वर्षकी अवस्थामे (८०२ ई०) परलोक-गामी हुए।

इस समय आचार्य विमलमित्र, बुद्धगुह्य, शांतिगर्भ, और विशुद्धसिंहने भोट-देशीय लो-च़-व (अनुवादक)※—धर्मालोक, (बन-दे) नम्-म्खऽ, (स्गो) रिन्-छेन्-स्दे, नम-पर-मि-तोग्-प और शाक्य-प्रभकी सहायतासे कितने ही ग्रंथोके अनुवाद किए। तो भी अभी वास्तविक अनुवादका काल आरंभ न हुआ था।

मु-नि-व्चन्-पो (८४५-४६ ई०)—सम्राट् ख्रि-स्रोङ् वीर थे, किंतु उससे भी अधिक वह धार्मिक थे। उनके विचारोका असर उनकी संतानपर पड़ा। जब उनके बाद उनका पुत्र मुनि-ब्चन्-पो गद्दीपर बैठा, तो वह दूसरा ही स्वप्न देखने लगा। उसका पिता और सारा घर धार्मिक शिक्षा, विशेषकर

※लो-च़-व शब्द लोक और चक्षु दो शब्दोंके आदि अक्षरोसे मिलकर बना है। चाहे वह लोग लोकके चक्षु न भी हो, किंतु इसमें तो शक नहीं कि भारतीय आचार्योंके लिए—जो भोट भाषासे अनभिज्ञ थे—वह अवश्य चक्षु थे।

बोधिसत्व आदर्श (अर्थात् दूसरोके हितके लिए तन, मन, धन ही नहीं, हाथमें आई अपनी मुक्ति तकका परित्याग करना)से सराबोर था। तरुण सम्राट्ने अपने आस-पास प्रजामे दरिद्रता देखी; जो दरिद्र नही थे, उन्हे भी उसने अपनेसे अधिक धनी-की शान-व-शौकत तथा अपमान भरे बर्तावसे असतोषकी भट्टीमे जलते देखा। वह सोचने लगा, किस प्रकार इस दुःख-का अत किया जावे। अतमे उसकी समझमे आया कि धन-का सम-वितरण ही इसका एक मात्र उपाय है। इस प्रकार ८४५-४६ ई०मे उसने आर्थिक साम्यवादका प्रयोग करना शुरू किया। किंतु इतने बड़े प्रयोगके लिए देशमे क्षेत्र तैयार न था। श्रमके सम-वितरणके बिना कभी भी अर्थका सम-वितरण सफल नही हो सकता। एक बार धनका सम-वितरण हो जाने-पर आलसियोसे कोई काम लेने वाला न रहा, थोडे दिनोंमे खा-पीकर वह फिर फाक मस्त हो गए, और दूसरे मेहनती लोगो-के पास फिर संपत्ति जमा होने लगी। सम्राट्ने एकके बाद एक तीन बारतक अर्थका सम-विभाग किया। तीसरी बार-के बाद यह प्रयोग दूरके लोगोको ही नही, बल्कि उस-की माँको भी असह्य हो गया, और इस प्रकार उन्नीस मासके शासनके बाद ही, माता द्वारा दिए गये विषसे, इस महात्मा-की मृत्यु हुई। मुनि-ब्चन्-पोको कुछ लोग पागल कहेगे, किंतु यदि वह पागल था, तो एक पवित्र आदर्शके पीछे। आज-कल जब कि मनन-शील पुरुषोकी विचार-धारा संसारको साम्य-

वादकी ओर ले जा रही है, इस साम्यवादके शहीदका आदर-पूर्वक स्मरण जरूर होगा।

खि-लृदे-ब्र्चन्-पो या सद्-न-लेग्स् (८४७-८७७ ई०)—मुनि-बचन्-पोके बाद उसका भाई खि-लृदे-बृचन्-पो सिंहासनपर बैठा। इसका भी बौद्धधर्मपर स्नेह अपने पिता और भाईसे कम नही था। सुदूर पश्चिम बल्तिस्तानके स्कर्-दो नगरमे इस-ने बौद्ध-मदिर बनवाया। अबतक कितने ही ग्र थोके अनुवाद भोट भाषामे हो चुके थे, किंतु अभीतक अनुवादके शब्दो और भाषामे किसी खास नियमका पालन नही किया जाता था। जिसको जो प्रतिशब्द अच्छा लगा, वह उसीका प्रयोग करता था। अश्ववर्ष (८५० या ८६२ ई०)मे सम्राट्ने अनुवाद करने वाले भारतीय पडित जिनमित्र, सुरेंद्रबोधि, शीलेंद्रबोधि, दानशील, बोधिमित्र तथा उनके सहायक भोट विद्वान् रत्नरक्षित, धर्मताशील, ज्ञानसेन (ये-शेस्-स्दे) जयरक्षित, मजुश्रीवर्म, रत्नेंद्रशीलसे कहा कि पहले देवपुत्र (मेरे) पिताके समय आचार्य बोधिसत्व, ज्ञानेंद्र, ज्ञानदेवकोष, ब्राह्मण. अनंत आदिने अनुवाद किए, किंतु उन्होने एक ऐसी भाषाका निर्माण किया, जो देश-वासियोके समझने लायक नही है। चीन, ली, सहारे आदिकी भाषाओके अनुवादसे प्रत्यनुवाद किए गए थे, जिन-में प्रतिशब्दका कोई नियम नही रक्खा गया। इसकी वजहसे धर्मग्र थोके समझनेमे कठिनाई होती है। इसलिए आप लोग अब सीधे संस्कृतसे अनुवाद करें, और प्रतिशब्दोकी एक

डाला, जिसपर रानीने आत्महत्या कर ली। स्वय सम्राट् भी लोह-पक्षी वर्ष (९११ ई०)मे ग्लङ्-दर्-मके कृपापात्र द्पस्-र्ग्यल्-तो-रे और (चो-रे) लेगस्-स्म द्वारा मार डाला गया। इस प्रकार १६२ वर्ष (६४०—८०२ई०) तक सत्कृत और संमानित होकर, फिर १०० वर्ष (८०२—९०१ ई०) तक असाधारण भक्तिका भाजन रहकर, अब बौद्धधर्मने भोट देशमे बुरे दिन देखे।

ग्लङ्-दर्-म (९०१-२ ई०)—भाईकी हत्या कराकर ग्लङ्-दर्-म सिहासनपर बैठा। चीनी इतिहास लेखक* दर्-मके बारेमे लिखते हैं—वह शराबका प्रेमी, खेलोका शौकीन, स्त्री-लपट, क्रूर, अत्याचारी और कृतघ्न था। यह सब होते हुए भी दर्-मको बौद्धधर्मपर अत्याचार करनेका मौका न मिला होता यदि बौद्ध-भिक्षुओने प्रभुत्व और मानकी लिप्सासे प्रेरित हो अपने प्रभावसे अनुचित लाभ उठाना न शुरू किया होता; और रल्-प-चन बौद्धधर्मके प्रति मर्यादित भक्ति दिखलाते हुए अपने राजाके कर्त्तव्यका भी ध्यान रखता। गलङ्-दर्-मने अपने भाईके हत्यारे द्पस्-ग्यल्को मत्रीका पद प्रदान किया। सभी ऊँचे पदोपर बौद्ध-विरोधियोकी नियुक्ति हुई। अनुवादकोके रहनेके मकान और पाठशालायें नष्ट कर दी गईं। उसने आज्ञा दी कि भिक्षु अपने धार्मिक जीवनको छोड़ गृहस्थ बन जावें। जो भिक्षु-

*'थङ्-शु', 'ऐंटिक्विटीज़ अव् इडियन टिबेट,' भाग २, पृ० ९२ से उद्धृत

वेषको छोडनेके लिए तैयार न थे, उन्हे धनुष-बाण देकर शिकारी बननेके लिए मजबूर किया गया। आज्ञा उल्लघन करने वाले कितने ही भिक्षु तलवारके घाट उतारे गए। जो-खङ्-रू मदिरसे हटाकर बुद्ध-मूर्त्ति बालूके नीचे दबा दी गई। मंदिर-का द्वार बदकरके उसपर शराब पीते हुए भिक्षुओंकी तस्वीरें अकित कर दी गईं। ल्हासाके र-मों-छे मदिर और ब्सम्-यस विहारके द्वार भी इसी प्रकार बद कर दिये गए। उस वक्त अधिकाश पुस्तकें ल्हासाकी चट्टानोमे छिपा दी गई थी। (अङ्) तिङ्-ङे-ऽजिन-ब्सूङ्-पो और (मं) रिन्-छेन-म्छोग् मार डाले गये। बाकी पंडित और लो-च्-व देश छोडकर भाग गये। अत्याचारके मारे बौद्ध भिक्षुओंका रहना असभव हो गया। उस समय (ग्चङ्)-रब्-ग्सल्, (फो-ख्रोङ्-प, ग्यो) दूगे-ऽब्युङ्, और (स्तोद्-लुङ्-प-स्मर्) शाक्यमुनि तीन भिक्षु दूपल्-छुवो-रिके पहाडमे एकांत जोवन बिता रहे थे। उन्होने ल्यि-र ब्येद्-प भिक्षुको आते देखा। पूछनेपर ग्लङ्-दर्-मके अत्याचारकी बात मालूम हुई। इसपर वह तीनो भिक्षु अपने 'विनय' ग्रंथोको समेटकर, एक खच्चरपर लादकर, म्ङ्ऽ-रिस् (मानसरोवर)की ओर भागकर चले गये। वहाँसे वह तुर्किस्तान (होर्) पहुँचे। वहाँ उन्होने बौद्ध-धर्मका प्रचार करना चाहा, किंतु भाषा और जातिके भेदके कारण वह उसमे सफल न हो सके और वहाँसे दक्षिणको अम्-दो चले गये।

बौद्धोने गलती की थी, और उसका दण्ड मिलना भी ज़रूरी था। तो भी इन पौने तीन सौ वर्षोंमे बौद्धधर्मने भोट देशकी बहुत सेवा की थी। यह सभव नही था कि इस थोड़ेसे अपराधके लिए वह मिटा दिया जाता। अतमे प्रतिक्रियाका रुख़ बदला। लोग वस्तुतः वर्त्तमानको ही पूरी तरह जानते हैं। अब बौद्ध अधिकारियोके गुण-दोष तो बीती हुई वस्तु हो गये थे, लेकिन लोग दर्-मके वर्त्तमान अत्याचारोको देख रहे थे। अब वह उससे ऊबते जा रहे थे। उस समय (ल्ह-लुङ) द्पल्-ग्यि दों-र्जे नामक एक भिक्षु येर् पऽि ल्हस्-बिङ्-पो पार्वत्य स्थानमे ध्यान-रत था। उसने जब यह सब बातें सुनी तो वह अपनेको रोक न सका। उसने भीतरसे सफेद और बाहरसे काली एक पोस्तीन धारण की; हाथमे लोहेके धनुष-बाण लिए और फिर वह अपने सफेद घोडेको स्याहीसे कालाकर, उसपर सवार हो ल्हासाकी ओर चल पड़ा। राजा उस समय जो खङ्के पास स्थापित महास्तभ (दों-रिङ्)पर खुदे लेखको पढ रहा था। सवारने घोड़ेसे उतरकर वदना करनेके बहानेसे तीरका ऐसा निशाना मारा, कि वह जाकर ठीक राजाके कलेजेमें लगा। अब वह इस घोषके साथ कि यदि किसी पापी राजाको मारना हो, तो ऐसे मारना चाहिए, घोडेपर सवार होकर निकल भागा। ल्हासामें शोर मच गया। लेकिन जनता तो पहले ही राजासे विरक्त हो चुकी थी। किसीने उसे न पकड़ पाया। द्पल्-दों र्जे एक जलाशयमे जाकर घोड़ेकी स्याही धो, अपनी पोस्तीनका

सफेद हिरसा ऊपर करके चलता बना। अपने स्थानपर पहुँच वह 'अभिधर्मसमुच्चय' (असंग), 'प्रभावती' (विनय-टीका), और 'कर्मशतक'की पोथियोको लेकर खम्स्की ओर चला गया। मरते वक्त दर्-मने यह शब्द कहे थे—"क्यो न मै तीन वर्ष पूर्व मारा गया, जिससे कि मै इतने पाप और अत्याचारसे बच जाता, या तीन वर्ष बाद मारा जाता जिसमे कि मै बौद्धधर्म-को देशसे मिटा सकता।"*

ऽोद्-स्रुङ्स् (काश्यप)—(६०२-६६५ ई०)—दर्-मके मरनेके बाद उसकी बड़ी रानीने गर्भवती होनेका बहाना किया, और जब ढूँढ़नेपर उसे एक लड़का मिला, तो मन्त्रियोंको दिखलाकर कहा—'यह मेरा लडका है'। दाँतवाले बच्चेको देखकर मंत्री जाल समझ गये, और बोले—'अच्छा यह जावे अपनी माँकी आज्ञा-पालन करे।' इसपर माँका आज्ञा-पालक (युम्-ब्र्तन्) ही उसका नाम पड़ गया। छोटी रानीका लड़का ऽोद्-स्रुङ्स् (काश्यप) गद्दीका मालिक हुआ। यद्यपि यह और इसके पुत्र द्पल्-ऽखोर्-ब-चन् (६६५-८२ ई०)ने दर्-मकी भूलको नही दुहराया, किन्तु अब राजशक्ति क्षीण हो गई थी। इसी समय राज्यके कितने ही भाग स्वतंत्र हो गये।

द्पल्-छु-वो-रिसे अपनी पुस्तकें खच्चरपर लादकर भागे हुए तीन भिक्षुओंके बारेमे मैं पहले कह चुका हूँ। जब वह दक्षिण

---

*'ऐंटिक्विटीज अव् इंडियन टिबेट', भाग २, पृष्ठ ६३३

अम्-दोमे रहते थे, त पता पाकर द्गोड्स्-क बस्तीके रहनेवाले एक तरुणने उनके पास आकर प्रव्रज्या पानेकी प्रार्थना की। इसपर भिक्षुओने उसे 'विनय'की एक पुस्तक पढ़नेको दी, और कहा, यदि यह बातें तुम्हे स्वीकार हो, तो हम तुम्हे श्रामणेर बनायेंगे। तरुणने पढकर इसकी प्रार्थना की। इसपर वह श्रामणेर बनाया गया, और नाम (द्गोड्स्-प) रब्-ग्सल् (प्रकाश) पड़ा। पीछे उसने भिक्षु बनाए जानेकी प्रार्थना की, किंतु वहाँ सघका कोरम पूरा करनेके लिए पाँच भिक्षु न थे, कोरमके लिए और दो भिक्षुओकी तलाश करते हुए उसे (ल्हँ लुङ) द्पल्·दों·जें मिला। प्रार्थना किये जानेपर उसने कहा, मैने राजाको मारा है, इसलिए 'पाराजिक' अपराधका अपराधी होनेसे अब मै भिक्षु नहीं रहा। फिर ढूँढ़नेपर उसे क्ये·वड् और ग्यि वड् दो ह्व शङ् (चीनी भिक्षु) मिले। इस प्रकार पच गण सघ बनाकर उसने भिक्षुकी दीक्षा पाई। यह रब्-ग-सल् आचार्य शातरक्षितकी परंपराका आगे चलानेवाला पुरुष हुआ। पीछे द्बुस् प्रदेशके पाँच पुरुष (क्लु-मेस-) छुल्-ख्रिम्स्, शेस्-रब्-ल्दिङ्-ये-शेस्-योन्-तन्, (रग्-शि) छुल्-ख्रिम्स्-ऽब्युङ्-ग्नस्, (शीलाकर) (वे) छुल्-ख्रिम्स्-ब्लो-ग्रोस्, (शील मूर्ति) और (सुम्-प) ये-शेस्-ब्लो (ज्ञानमति); तथा ग्चङ् प्रदेशके पाँच पुरुष—गुर्-मो-(रब्-ख प) ब्लो स तोन्, दों जें द्वङ्-फ्युग्, (शब् स्गो-ल्ङ्ऽ-छोङ्ब्चुन्) शेस्-रब्-सेङ्-गे, (मुङ्ऽ-रिस्) ऽोद-ब्र्ग्यद्,

और (फो-ख्रोङ्) उ-प-दे-दूकर्-पो—यह दस व्यक्ति आकर भिक्षु रब्-ग्सल्के शिष्य हुए। इन्ही दस भिक्षुओने लौटकर मध्य तिब्बतमे फिरसे प्रचार करना शुरू किया। ञिङ्-म-प सम्प्रदायके सभी मठ इन्हीको परंपरासे सम्बन्ध रखते हैं।

३—दीपंकर-युग (१०४२-११०२)

स्रोङ्-ब्चन्के वंशने लगातार पौने तीन सौ वर्ष तक अपने विस्तृत साम्राज्यको कायम रक्खा। धर्मकी असाधारण भक्ति रखते हुए भी इनमे सात पीढियोतक शासक और योद्धा-की योग्यता बनी रही। ऐसे उदाहरण बहुत कम मिलते है। भारतमे गुप्त-सम्राटोंका वंश वीर पैदा करनेमे मशहूर रहा है, किंतु वह भी दो सौ वर्ष तक ही चला। मुगल बादशाह भी पाँच पीढ़ियो तक ही प्रबल रहे। किंतु दर्-मके बाद पतन शीघ्रतासे होने लगा। दूपल्-ऽखोर्-व-चन् (मृ०६८३ई०)तक जो कुछ बचा था वह भी उसके बाद जाता रहा। तिब्बत ख़ास हो अनेक टुकड़ोमे बँट गया। क्रांतिके कारण ऽखोर्-वचन्-का दूसरा पुत्र ख्रि-स्क्यिद्-ल्दे-ञि-म मूगोन् ल्हासा छोड़ने-पर मजबूर हुआ। वह एक सौ सवारोके साथ पश्चिमी तिब्बत (मूङऽ रिस्)की ओर चला गया। वहाँ अपने विश्वास-पात्र सेवकोकी सहायतासे उसने अपने लिए स्थान बना लिया। अश्व-वर्ष (६८२ ई०)मे उसने र-लमे लाल-महल बनवाया। मेष-वर्ष (६८३ ई०)में चे-शी-ग्यं-रि नामक महल बनवाया। इसी वक्त स्पुड् रङ्स्के शासक ढ्गे-ब्शेस्-ब्चन्ने उसे

अपनी राजधानीमें बुलाया और अपनी कन्या ऽब्रो·स्·ऽखोर·स्क्योङ्के साथ अपना राज्य उसे प्रदान किया। ञि·म-मगोन-ने फिर मृङऽ·रिस्·स्कोर-गसुम् (लदाख, गूगे, और स्-पु·रङ्स्)को अपने अधिकारमें करके एक स्वतंत्र राज्य कायम किया। अंतमें राज्यको इसने अपने तीनों पुत्रों—द्पल्·ग्यि-ल्दे (लदाख), ब्क्र·शिस्·ल्दे·मगोन् (स्पुरङ्स्) और ल्दे·ग्चुग्·मगोन् (शङ्·शुङ या गूगे)में बाँट दिया। ल्दे·ग्चुग्·मगोन्का ज्येष्ठ पुत्र ऽखोर्·ल्दे राज्यको अपने छोटे भाई स्रोङ्-ल्देके हाथमें सौंपकर स्वयं अपने दोनों पुत्रों, नागराज और देवराजके साथ भिक्षु हो गया।

ग्यारहवीं शताब्दीके प्रथम पादमें तिब्बतमें बौद्धधर्ममें बहुतसे विकार पैदा हो गये थे। भिक्षुओंने धर्म-ग्रन्थोंका पढ़ना छोड़ दिया था। वह वर्षावासके तीन मास तक ही भिक्षु आचारका पालन करते थे, उसके बाद उसकी परवा नहीं करते थे। तांत्रिक लोग मद्य और व्यभिचारको ही परम धर्म-चर्या मानते थे। मठोंके अधिकारी चमकीली वेष-भूषा पहिन-कर, अपनेको स्थविर और अर्हत् प्रकट करते फिरते थे। ऽखोर्-ल्दे (भिक्षु बननेपर इसका नाम ये·शेस्ऽोद अर्थात् ज्ञानप्रभ पड़ा)ने स्वयं धर्म-ग्रंथों को पढ़ा था, और वह एक विचारशील व्यक्ति था। इसका तो इसीसे पता लगता है, कि तंत्रोंके बुद्ध-वचन होनेमें उसे बहुत संदेह था।* वह अच्छी तरह समझता

* 'बु-स्तोन्', भाग २, पृष्ठ २१२

था, कि बौद्धधम ही उसके पूर्वजोकी एक चिरस्थायी कृति है। धर्मके इस ह्रासको हटानेके लिए उसने सबसे ज़रूरी बात समझी—धार्मिक ग्रन्थोका अध्ययन। इसकेलिए उसने रिन्-छेन् ब्सङ्-पो (९५८-१०५५ ई०), लेग्स्पडि शेस्-रब् आदि इक्कीस तरुणोको चुनकर कश्मीर पढ़नेके लिए भेजा। मानसरोवर जैसी ठण्डी जगहके रहनेवाले इन नौजवानोके-लिए कश्मीर भी गर्म था। अंतमे दोको छोडकर बाक़ी सब वही बीमारीसे मर गए। रिन्-छेन्-ब्सङ्-पोने लौटकर पडित श्रद्धाकरवर्मा, पद्माकरगुप्त, बुद्धश्रीशांत, बुद्धपाल, और कमलगुप्त आदिकी सहायतासे कितने ही दर्शन और तंत्र-ग्रंथोके भोट भाषामे अनुवाद किए। 'हस्तवाल-प्रकरण' (आर्यदेव), 'अभि-समयालकारा-लोक' (हरिभद्र), 'वैद्यक अष्टांग-हृदयसहिता' (नागार्जुन), 'चतुर्विपर्यय-कथा' (मातृचेट) 'सप्तगुणपरिवर्णन-कथा' (वसुबधु), 'सुमागधावदान' आदि ग्रंथोके इन्होने अनुवाद किए। दीपंकरश्रीज्ञान (जन्म ९८२ मृत्यु १०५४ ई०)के तिब्बत पहुँचनेपर और भी कितने ही ग्रथोके भाषांतर करनेमे सहायता की। रिन्-छेन्-ब्सङ्-पोने गू-गे (शङ्-शुङ्), स्पि-ति और लदाखमे कई सुदर मंदिर बनवाए, जिनमे कई*

*लदाख में सुम्-दा और अल्-चीके मदिर, और स्पि-तिका त्ह-लुङ् मदिर इन्हींमेंसे है। इनमें सारे ही चित्र भारतीय चित्रकारोंके बनाए हैं। दसवीं-ग्यारहवीं शताब्दीकी चित्रकलाके यह सुदर कोश हैं। खेद है कि रक्षाका कोई प्रबध न होनेसे यह नष्ट होते जा रहे हैं। ईधन

अब भी मौजूद हैं, और उनमें उस समयकी भारतीय चित्रकलाके सुंदर नमूने पाये जाते हैं।

राजभिक्षु ज्ञानप्रभने जब देखा, कि उनके भेजे इक्कीस तरुणोंमें उन्नीस कश्मीरसे जीवित नहीं लौट सके, तो उन्होने सोचा कि यहाँसे भारतमे विद्यार्थियोको भेजनेके स्थानपर यही अच्छा होगा, कि भारतसे ही किसी अच्छे पडितको यहाँ बुलाया जावे, जो यहाँ आकर सुधारका काम करे। उन्हे यह भी मालूम हुआ, कि विक्रमशिला महाविहारमें ऐसे एक पंडित भिक्षु दीपकर-श्रीज्ञान हैं। उनके बुलानेके लिए आदमी भेजा गया, किंतु वह न आए। दूसरी बार फिर दूत भेजनेकी तैयारी हुई। इसके लिए कुछ सोनेका सग्रह करने जब वह अपने सीमांत प्रदेशमें गए हुए थे, उसी समय पड़ोसी राजाने उन्हे पकड़ लिया। उनके उत्तराधिकारी ब्यड-छुप्-ऽोद् (बोधिप्रभ)ने चाहा, कि धन देकर उन्हे छुड़ा लें, ज्ञानप्रभने कहा, वह धन भारतसे किसी पडितके बुलानेमे खर्च किया जाय।

ग्यारहवी शताब्दीमें विक्रमशिला विहार (वर्तमान सुल्तान-

दुर्लभ होनेके कारण तिब्बतमें पक्की दीवारोंका रिवाज नहीं है। दीवार अस्थायी होनेसे भित्तिचित्र भी अस्थायी होते हैं। फिर भी पच्छिमी तिब्बतके पुराने मठोंकी दीवारें कहीं-कहीं अभीतक ज्यों की त्यों मौजूद हैं। उनपर अजन्ता-शैलीकी तूलिकाके चमत्कार अब भी देखे जा सकते हैं। वास्तवमे धर्मके साथ चित्र और स्थापत्य कला भी भारतसे तिब्बत पहुँच गई थी।

गज, जिला भागलपुर) उत्तरी भारतमे एक बड़ा ही विशाल विद्याकेंद्र था। युवराज़ होनेकी अवस्थामे चद्रगुप्त विक्रमादित्य चंपाका प्रदेशाधिकारी था। उस वक्त सुल्तानगजकी दोनों पहाड़ी टेकरियोपर उसने कुछ मदिर बनवाए थे, और उसीके नामपर यह स्थान विक्रमशिलाके नामसे प्रसिद्ध हुआ। पीछे पालवशीय महाराज धर्मपाल (७६९-८०९ ई०)ने गंगा-तटवर्ती इस मनोरम स्थानपर एक सुदर विहार बनवाया, यही विक्रम-शिला महाविहार हुआ। इस विहारके कुछ ही दूर दक्षिण-मे एक सामत राजधानी थी, जिसके यहाँ दीपकरश्रीज्ञान-का जन्म हुआ था। नालदा, राजगृह विक्रमशिला, वज्रासन (बोधगया) ही नही बल्कि सुदूर सुवर्ण द्वीप (सुमात्रा) तक जाकर दीपंकरने विद्याध्ययन किया। पीछे वह विक्रमशिला-के आठ महापडितोमे एक होकर वही अध्यापनका कार्य करने लगे। यद्यपि पहली बार राजभिक्षु ज्ञानप्रभके निमंत्रणको उन्होने अस्वीकार कर दिया था, किंतु जब राजभिक्षु बोधिप्रभके भेजे दूतोके मुखसे उन्होने ज्ञानप्रभके महान् त्यागकी बात सुनी, तो चलनेके लिए उन्होने अपनी स्वीकृति दे दी। इस प्रकार १०४२ ई० (जल-अश्व वर्ष) मे वह मृङ-ऽ-रि स् पहुँचे। भोट देशवासियोने उनका बड़ा स्वागत किया। पहले मानसरोवरके पश्चिममे अवस्थित थो-ग्लिङ् (शुङ्-शुङ्) मठमे रहे। यहाँ उन्होंने अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ 'बोधिपथप्रदीप' लिखा। १०४४मे वह स्पु-रङ्स् गए। यही उन्हें (ब्रोम्-स्तोन्) म्र्यल्-व-ऽब्युङ्-ग्नस्

(१००३-६४ ई०) मिला। यह उनका प्रधान शिष्य था, और तबसे अंततक यह बराबर अपने गुरुके साथ रहा। दीपकर (अतिशा)के अनुयायी (ऽब्रोम स्तोन्‌की शिष्यपरंपरा वाले) ब्कऽ-दम्-पके नामसे प्रसिद्ध हुए। चोङ्-ख-प (१३५७-१४१६ ई०)का भी इसी ब्कऽ-दम्-प संप्रदायसे संबंध था और इसीलिए उसके अनुयायी द्गे-लुगस्-प (भिक्षुनियमवाले) अपनेको नवीन ब्कऽ-दम्-प भी कहते हैं।

दीपंकरश्रीज्ञानने अपने जीवनके अंतिम तेरह वर्ष तिब्बत देशमें धार्मिक सुधार और ग्रंथानुवादमें बिताए। म्ङ्-ऽरिससे वह ग्चङ् और द्बुस् प्रदेशोमें गए। १०४७ ई०मे वह ब्सम्-यस् पहुँचे। उस वक्त वहाँके पुस्तकभडारको देखकर वह दंग रह गए। वहाँ उन्हे कुछ ऐसी पुस्तकें भी देखनेको मिली जो भारतके बड़े-बड़े विद्यालयोमे भी दुर्लभ थी। १०५० ई०मे वह येर्-प गए, और १०५१ ई०(लोह-शश वर्ष)मे उन्होने 'कालचक्र'पर अपनी टीका लिखी। १०५४ ई०मे ७३ वर्षकी अवस्थामे ल्हासासे आधे दिनके रास्तेपर स्ञे-थङ् स्थानमे उनका शरीरांत हुआ।

अनुवाद करनेमे उनके प्रधान सहायक (नग्-छो) छुल्-ख्रिम्स्-र्ग्यल् व, रिन्-छेन्-ब्स-ङ्-पो, द्गे-वऽ-ब्लो-ग्रोस् और शाक्य-ब्लो-ग्रोस् थे। इनके अनुवादित और सशोधित ग्रंथोकी सख्या सैकड़ो है। महान् दार्शनिक भाव्य (भावविवेक)के ग्रंथ 'मध्यमकरत्नप्रदीप' और उसकी व्याख्याको इन्होने ही (र्ग्य)चोन्-सेङ् और नग्-छोके दुभाषिया होते हुए, अनुवादित किया था।

पडित सोमनाथ (१०२७ ई०) । दीपकरश्रीज्ञानके भोट पहुँचनेसे कुछ पूर्व कश्मीरी पडित सोमनाथ भोट गए। (ग्यॅ-चो) स्-वङ्-ऽोद्-सेरकी सहायतासे इन्होने 'कालचक्र ज्योतिष'का भोट ल

भाषामे अनुवाद किया, और तभीसे भोट देशमे वृहस्पति चक्रके ६० सवत्सरोका नया क्रम जारी हुआ। साठ संवत्सरोके एक चक्रको भोट भाषामे रब्-ऽब्युड् (प्रभव) कहते है। यह प्रभव हमारे यहाँके भी षष्ठी संवत्सर-चक्रका आदिम सवत्सर है। लक्ष्मीकर, दानश्री, चद्रराहुल, सोमनाथके साथ ही भोट देश गए थे।※

दीपकरश्रीज्ञानके विद्यागुरु सिद्ध महापडित अवधूतिपा (अद्वयवज्र या मैत्रीपा भी) थे। इन्हीके शिष्य वैशाली (बसाढ, जि० मुजफ्फरपुर)के रहनेवाले कायस्थ पडित गयाधर थे। यह (ऽब्रोग्-मि) शाक्य ये-शेस् (मृत्यु १०७४ ई०)के निमत्रणपर भोट गए। और पॉच वर्ष रहकर इन्होने बहुतसे तत्र-ग्रथोके भोट भाषामे अनुवाद किए। चलते वक्त ऽब्रोग्-मिने इन्हे पॉच सौ तोला सोना अर्पित किया। यह स्वय भी हिंदी भाषाके कवि थे, इनके पुत्र तिब्रूपा एक पहुँचे हुए सिद्ध समझे जाते थे। पडित गयाधरने (ग्यिॅ-जो) स-वङ्-ऽोद्-सर्के साथ 'बुद्धकपाल-तत्र'का अनुवाद किया ल

※'ऽब्रु ग्-प-छोस्-ऽब्युङ्', पृष्ठ १५२क, १६८ख, २५१ख
सवत्सरचक्रकेलिए परिशिष्ट १ और २ देखिए

था, और (ड्गोस् खुग्-प) ल्ह-ब्चस्के साथ 'वज्रडाकतंत्र'*का।

ज्ञानप्रभके समयमें ही लो-च-व पद्मरुचिने स्मृतिज्ञानकीर्ति और सूक्ष्मदीर्घ दो भारतीय पंडितोको अनुवादके कार्यकेलिए बुलाया। लो-च-व हैजेसे नेपालमे मर गया, और यह लोग भोटमे पहुँच गए। इन्हे उस समय भाषा भी न आती थी। पंडित सूक्ष्मदीर्घ तो (रोङ्-प) छोस्-ब्सङ्के पास रहने लगे, किंतु स्मृतिज्ञानकीर्तिने किसीका आश्रय ढूँढ़नेकी अपेक्षा भेड़की चरवाही पसंद की। यह मालूम नहीं, कितने वर्षोंतक तिब्बतके खानाबदोश ब्यङ्-पकी भाँति इन्होने चँवरीके बालोके काले तंबुओमे रह, तं-नग्मे चरवाहीका जीवन व्यतीत किया। स्मृतिज्ञान, मालूम होता है, कोई मस्त मौला ही थे। इस भेड़की चरवाहीमे एक फायदा जरूर हुआ, वह यह कि उन्हे भोट भाषाका सुंदर अभ्यास हो गया। स्मृतिज्ञान और विभूतिचंद्र (१२०४ ई०) जैसे बहुत थोड़े ही भारतीय पंडित हैं, जिन्होने विना लो-च-वकी सहायताके भारतीय ग्रंथोका भोट भाषामे अनुवाद किया हो। पीछे (स्ग्यल्-से-च्ब्) ब्सोद्-नम्स्-र्ग्यल्-म्छन्के निमंत्रणपर स्मन्-लुङ्में जाकर उसे इन्होने बौद्ध ग्रंथोको पढ़ाया। फिर खम्स् (पूर्वीय भोट)मे जाकर ड्दन्-क्लोङ्-थङ्में अभिधर्मकोशके अध्ययनकेलिए एक विद्यालय स्थापित किया। इन्होने 'चतुष्पीठ-टीका', 'वचनमुख' आदि कितने ही अपने लिखे ग्रंथोका भोट भाषामें उल्था किया।

---

*इस ग्रंथकी मूल संस्कृत प्रति ताल-पत्रपर लेखकको १९३० ई०में श-लु विहारसे प्राप्त हुई

शि-व-ऽोद् (ज्ञानप्रभके भाई), राजा ल्होड्-ल्देके पुत्र ल्ह-ल्दे थे। इनके तीन पुत्रोमे बड़ा ऽोद् ल्दे राजा हुआ, और व्यङ्-छुप-ऽोद् और शि-व-ऽोद् दोनो छोटे लड़के भिक्षु हो गए। दीपंकर-श्रीज्ञानको बुलाकर जिस प्रकार व्यङ्-छुप्-ऽोदने धर्मप्रचार कराया, यह पहले लिखा जा चुका है। राजा ऽोद्-ल्देने पण्डित सुनयश्रीको बुलाकर कितने ही ग्रंथोके अनुवाद कराए। शि-व-ऽोद् (शांतिप्रभ) स्वय अच्छा विद्वान् था। इसने जहाँ सुजन-श्रीज्ञान, मन्त्रकलश और गुणाकरभद्रसे कितनी ही पुस्तकोके अनुवाद कराए वहाँ स्वय आचार्य शांतरक्षितके गभीर दार्शनिक ग्रंथ 'तत्त्वसंग्रह'का अनुवाद किया।

चे-ल्दे। ऽोद्-ल्देके बाद उसका पुत्र चे ल्दे मानसरोवर प्रात (शङ्-शुङ् और स्पु-रङ्स्)का शासक हुआ। १०७६ ई०मे इसने एक अच्छा विद्यालय स्थापित किया, और (ङोंग्) ब्लो-ल्दन्-शेस्-रब् (१०५९-११०८)को उसी साल कश्मीर पढ़नेकेलिए भेजा। १०९२ ई०तक ङोंग्ने कश्मीरमे रहकर पंडित परहितभद्र और भव्यराजसे न्याय, तथा ब्राह्मण सज्जन और अमरगोमी आदिसे योगाचारके कितने ही ग्रंथोंका अध्ययन किया। पण्डित भव्यराज अनुपमनगर (प्रवरपुर=श्रीनगर ?)के पूर्व ओर चक्रधरपुर सिद्धस्थानमे रहते थे। यहीं ङोंग्ने धर्मकीर्तिके प्रसिद्ध न्याय-ग्रंथ 'प्रमाणवार्तिक'*का फिरसे भोट भाषामे अनुवाद

*प्रथम बार इसका अनुवाद दीपकरके साथी सुभूतिश्रीशाति और द्गे-वऽि-ब्लो-ग्रोस्ने किया था

किया। पंडित परहितभद्रकी सहायतासे इसने धर्मकीर्तिके 'प्रमाणविनिश्चय' और 'न्यायबिंदु'के अनुवाद भी किए। चे-लूदेके बाद उसके पुत्र राजा द्बङ्-लूदे और पौत्र राजा ब्क्र-शिस्-लूदे भी ङोग्के काममें सहायता करते रहे। कश्मीरमें सत्रह वर्ष रहकर ङोग्ने भोटमें लौटकर चौदह वर्षोंतक अपना काम किया। यहाँ रहते हुए उसने पंडित अतुलदास, सुमतिकीर्ति, अमरचंद्र और कुमारकलशके साथ अनुवादका काम किया। प्रसिद्ध 'मंजु-श्रीमूलकल्प'का इसने पंडित कुमारकलशके साथ मिलकर उल्था किया था।

फ-उम-प-सङ्स्-र्ग्यस् (मृ० १११८ ई०)। १०९२ ई०में यह भारतीय पंडित-सिद्ध भोट देशमें आया। यह नेपालके रास्ते ञ-नम् होकर गूलङ्-स्कोर पहुँचा था। यहाँ रहते हुए इसने कुछ ग्रंथोंके अनुवादमें सहायता पहुँचाई। यह पूरा परिव्राजक था। ११०१ ई०से यह चीन गया, १११३ ई०में फिर तिब्बत आया। इसने शि-ब्येद् सम्प्रदायकी स्थापना की, जिसका कि एक समय भोट देशमें अच्छा प्रभाव था।

इसी कालमें एक और विद्वान् लो-च-व हुआ, जिसका नाम (प-छब्) ञि-म-ग्रग्स् (रविकीर्ति) है। इसका जन्म १०५५ई०में हुआ था, अर्थात् उसी वर्ष जिस वर्ष कि महान् लो-च-व रिन-छेन् बूसङ्-पोका देहांत हुआ। इसने कश्मीरमें जाकर तेईस वर्षतक अध्ययन किया। इसने (आर्यदेवके), 'चतुःशतक शास्त्र', (चंद्रकीर्तिके) 'मध्यमकावतार-भाष्य' (पूर्णवर्द्धनकी) अभि-

धर्मकोशटीका, 'लक्षणानुसारिणी', (चंद्रकीर्तिकी) मूलमध्यक-वृत्ति 'प्रसन्नपदा' जैसे गभीर दार्शनिक ग्रंथोके अनुवादसे अपनी मातृभाषाके कोशको पूर्ण किया। कनकवर्मा, तिलकलश आदि पंडित इसके सहायक थे।

(मर्-प) छोस्-क्यि-ब्लो-ग्रोस्। यह सिद्ध नारोपा (नाडपाद, मृ० १०४० ई०)का शिष्य था, और तीन बार भारतमे जाकर रहा था। इसने अनुवादका काम कम किया, किंतु यह और मि-ल-रस्-प (१०४०-११२३ ई०) जैसे इसके शिष्य अपनी विचित्र चर्यासे तिब्बतमे चौरासी सिद्धोके यथार्थ प्रतिनिधि थे। मि-ल-रस्-प भोट देशका सर्वोत्तम कवि ही नही था, बल्कि इसके निस्पृह अकृत्रिम जीवनने इन आठ शताब्दियोमे वहाँ बहुतोके जीवनमे भारी प्रभाव डाला है। मर्-प, मि-लकी परपरावाले लोग द्कर्-ग्युद्-प कहे जाते हैं। भोट देशके द्वग्स्-पो, ऽब्रि-गोङ्-प, फग्-म्रु व-प ऽब्रुग्-प, स्तग्-लुङ्-प और स्कर्-म-प इसी द्कर्-ग्युद्-प सम्प्रदायकी शाखाएँ हैं। कर्-म (स्कर्-म) संघराज सकर्-म-बक्-सि-छोस्-ऽजिन् (१२०४-८३) अपने सिद्धत्वके कारण मंगोल-सम्राट्का गुरु हुआ था। फग्-म्रु ब्-प और ऽब्रि-गोङ्-पने कितने ही वर्षोंतक मध्य भोटपर शासन किया।

४—स-स्क्य-युग (११०२-१३७६ ई०)

(ऽखोन्) द्कोन्-म्र्यल् (१०३४-११०२ ई०) नामके एक गृहस्थ-धर्माचार्यने, ग्चुङ् (चङ्) प्रदेशमे १०७३ ई०मे स-स्क्य

नामक विहारकी स्थापना की। यद्यपि इस विहारका आरंभ बहुत छोटेसे हुआ, किंतु इसने आगे चलकर बौद्धधर्मकी बड़ी सेवा की। इसके संघराजोंका प्रभाव भोट देशसे बाहर चीन और मंगोलिया तक पड़ा। चंगेजखां (चिङ्-हिर्-ह्मन्)के शासन-कालमें ११२२ ई०में यहींके संघराजने सर्वप्रथम मंगोलियामें बौद्धधर्मका प्रचार किया।

(ऽखोन्) द्कोन्-र्ग्यल्ने व-रि-लो-च-व (मृ० ११११ ई०)को अपना उत्तराधिकारी चुना। व-रि कितने ही समयतक भारतमें जाकर वज्रासन (बोधगया)के आचार्य अभयाकरगुप्तके पास रहा था। अभयाकरगुप्तका जन्म झारखंड (वैद्यनाथके आस-पासका प्रदेश)में क्षत्रिय पिता और ब्राह्मणी मातासे हुआ था*। यह शास्त्रोंके अच्छे पंडित थे। पीछे इन्होंने अवधूतिपाके शिष्य सौ.रेपासे सिद्ध-चर्याकी दीक्षा ली। मगधेश्वर रामपाल (१०५७-११०२)के यह गुरु थे। नालंदा और विक्रमशिला दोनों ही विश्वविद्यालयोंके यह महापंडित माने जाते थे। इनका देहांत ११२५ ई०में हुआ।

व-रिने अपना उत्तराधिकारी, मठके संस्थापक द्कोन्-र्ग्यल्-के पुत्र कुन्-द्गऽ-स्निङ्-पो(१०९२-११५८)को चुना। उसके बाद उसके पुत्र ग्रगस्-प-र्ग्यल्-म्छन् (११४७-१२१६ ई०) विहाराधिपति हुए। यह अच्छे विद्वान् थे। इन्होंने दिङ्नागके 'न्यायप्रवेश' और 'चंडमहारोषणतंत्र' आदि ग्रंथोंके अनुवाद किए।

*'रिन्-छेन्-ऽब्युङ्-ग्नस्-ग्तम्', पृ० ४७ ख

(खो-फु) ब्यम्स्-प-द्पल् (जन्म ११७३ ई०) इसी कालमे हुआ था। यह काशराज जयचंदके दीक्षा-गुरु मित्रयोगी❋ (जगन्मित्रानंद)को ११९८ ई०मे भोट ले गया। मित्रयोगीकी 'चतुरंग-धर्मचर्या'का इसने अनुवाद किया। १२०० ई०मे कश्मीरी पंडित बुद्धश्रीको बुलाकर उनके साथ इसने अभिसमयालंकारकी टीका 'प्रज्ञाप्रदीप'का अनुवाद किया। इसीके निमंत्रण पर विक्रमशिलाके अंतिम प्रधान-स्थविर शाक्यश्रीभद्र भोट देशमे आए।

शाक्यश्रीभद्र—इनका जन्म कश्मीरमे ११२७ ई०मे हुआ था। बोधगया, नालंदा, विक्रमशिला उस समय सारे बौद्धजगत्के जीवित केंद्र थे। इसीलिए यह भी मगधकी ओर आए। सुखश्री इनके दीक्षा गुरु थे। रविगुप्त, चंद्रगुप्त, विख्यातदेव (छोटे वज्रासनीय), विनयश्री, अभयकीर्ति और रविश्रीज्ञान इनके विद्यागुरु थे। अपने समयके यह महा-विद्वान् थे—यह तो इसीसे मालूम होता है, कि यह मगध-नरेशके गुरु तथा विक्रमशिला महाविहारके प्रधान नायक थे। मुहम्मद-बिन्-बख्तियारने जब नालंदा और विक्रमशिलाको ध्वस्त कर दिया, तो यह

❋इनका जन्म राढ (पश्चिमी बंगाल) देशका था। सिद्ध तेलोपाके शिष्य ललितवज्रसे इन्होंने सिद्धचर्याकी दीक्षा ली थी। पीछे उडन्तपुरी विहारके प्रधान हुए। काशीश्वर महाराज जयचंद इनके शिष्य थे ('ऽब्रुग्-प-छोस्-ऽब्युङ्', पृष्ठ १५३ क, 'इंडियन हिस्टारिकल क्वार्टर्ली', मार्च १९२५, पृ० ४-३०)

जगत्तला* (बगाल) चले गए। वहॉं कुछ दिन रहकर और सभवतः उसके भी ध्वस्त होनेपर जब यह जगत्तलाके पडित विभूतिचद्र, तथा दानशील, सघश्री (नेपाली), सुगतश्री आदि नौ पडितोके साथ नेपालमे थे, तो वही इन्हे ऽख्रो-फु लो-च-व मिला। उसकी प्रार्थना-पर यह १२०० ई०मे भोट देशमे आकर, दस वर्षतक रहे। इन्होन पुस्तक-अनुवादका काम नही किया, और इनके ग्रथ भी एकाध ही अनूदित हुए हैं, इससे जान पड़ता है, कि महाविद्वान् होते हुए भी, यह लेखनीके धनी न थे। स-स्क्यमे पहुॅचनेपर तत्कालीन विहाराधिपति ग्रग्स्-प-ग्यल्-म्छन्के भतीजे और उत्त-राधिकारी, कुन्-द्गऽ ग्यल्-म्छन (११८२ १२५१ ई०) १२२८ ई०में इनके भिक्षु- शिष्य हुए। 'प्रमाणवार्तिक' आदि कितने ही न्यायके गभीर ग्रथोका उन्होने इनसे अध्ययन किया। ब्यङ्-छुप-द्पल् और द्गे वऽि-द्पल् आदि और भी कितने ही शाक्यश्रीभद्र-के शिष्य हुए। स स्क्य-सप्रदायके पीछे इतने प्रभावशाली बननेमे उसका विक्रम शिलाके अतिम प्रधाननायकसे सबध भी कारण हुआ। दस वर्ष रहकर, १२१३ ई०में, शाक्यश्रीभद्र अपनी जन्मभूमि कश्मीरको लौट गए, जहॉं १२२५ ई०मे ९८ वर्षकी दीर्घ आयुमें इनका देहांत हुआ। इनके अनुयायी विभूतिचंद्र, दानशील आदि भोट हीमे रह गए, जिनमें विभूतिका भोट

*इसे मगधराज महाराज रामपाल (१०५७-११०२ ई०)ने अपने शासनके सातवे वर्ष (१०६४ ई०)में स्थापित किया था ('म्तन्-ऽग्युर्', अष्टसाहस्रिका-टीकाके अंतमें)

भापापर इतना अधिकार हो गया कि उन्होने कितने ही ग्रथोके अनुवाद विना किसी लो-च्-वकी सहायता हीके किए।

कुन्-द्गऽ-र्ग्यल् मछ्न. सघराज (११८२-५१ ई०)। यह भोट देशके उन चंद धर्माचार्योमे है, जिन्होने धर्मप्रचारकेलिए वहुत भारी काम किया। भोट-देशीय ऐतिहासिकोके मतानुसार चंगेज़खाँ (जन्म ११६२ ई०) ११६४ ई०मे चीनका सम्राट् हुआ। १२०७ ई०मे मि-ञग् प्रदेशको छोड़कर सारा भोट उसके अधिकारमे चला गया। जिस समय चंगेज़ देश-विजय कर रहा था, उसी समय स-स्क्य-पडित कुन्-द्गऽ-र्ग्यल् मछन्ने धर्म-विजयकी ठानी, और उन्होने १२२२ ई०मे मगोल देशमे धर्मप्रचारक भेजे। १२३६ ई०मे मगोल सर्दार छि-ग्य-दो तीने मध्यभोटपर चढ़ाई की, और स स्क्य मठके पाँच सौ भिक्षुओको मार डाला। र·स्ग्रे ङ् और ग्यल् खङ्के मठोको भी इसने जला डाला। १२४३ ई०मे संघराजने अपने दो भतीजो ऽफग्स्·प और फ्यग् नको प्रचारकेलिए मंगोलिया भेजा। १२४६ ई०मे वह स्वय चीनके मंगोल सम्राट् गोतन्से मिले, और दूसरे वर्ष सम्राट्के गुरु बने। सम्राट्ने १२४८ ई०मे भोट देशके द्बुस् और ग्चङ् प्रदेश अपने गुरुको प्रदान किए। भोट देशमे धर्माचार्योंके शासनका सूत्रपात इसी समयसे हुआ। धर्मप्रचारके काममे लगे रहते हुए मगोलियाके स्प्रुल्-स्दे स्थानमे, १२५० ई०मे, इनका देहांत हुआ। यह अच्छे पंडित और कवि थे। इनकी पुस्तक 'स·स्क्य लेग्स् व्शद्'-की नीति शिक्षा पूर्ण गाथाएँ अब भी भोटदेशके पाठ्य·विपयोमे हैं।

ऽफग्स्-प, संघराज (१२५१-८० ई०)। इनका जन्म १२३४ ई०मे हुआ था। इनके मगोलिया जानेकी बात पहले ही कही जा चुकी है। चचाकी मृत्युके बाद यह सघराज बने। स-स्क्य विहारमे तबसे अबतक यही प्रथा चली आती है, कि घरका एक व्यक्ति भिक्षु बन जाता है, और वही पीछे सघराजके पदपर बैठता है। चचा ने ऽफग्स्-पकी शिक्षाका विशेष ध्यान रक्खा था। १२५१ ई०मे ऽफग्स्-प भावी चीन सम्राट्, राजकुमार कुब्ले हान्-के गुरु बने। १२६५ ई०तक वह चीन और मगोलियामें ही रहे। १२६६ ई०मे फिर मगोलिया गए, और १२८० ई०मे उनका देहांत हुआ।

स्कर्-म-बक् सि छो-ऽजिन् (१२०४-८३ ई०)। स स्क्य के ऽफग्स्-पका यह समकालीन था। यद्यपि पांडित्यमे स स्क्योकी समानता नही कर सकता था, किंतु यह अपने समयका अद्भुत चमत्कारी सिद्ध समझा जाता थ । चीनके मगोल सम्राट् मुन्-खेने इसके सिद्धत्वकी परीक्षा ली, और १२५६ ई०से उसने इसे अपना गुरु बनाया।

जिस समय स-स्क्य प और द्कर्-ग्युद्-प सम्प्रदायके प्रमुख इस प्रकार विद्या, सिद्ध चर्या, और धर्म-प्रचारके जोशमे अपने प्रभावको बढ़ा रहे थे, उसी समय आचार्य शांतरक्षितका अनु-यायी, भोटका सबसे पुराना धार्मिक सम्प्रदाय ञिङ्-म प नीचे गिरता जा रहा था। इसने पुराने बोन् धर्मकी भूत-प्रेत-पूजा, जादू-मंतरको अपनाकर, उसमें और और तरक्की की। इसके गुरु

लोग मिथ्या विश्वास-पूर्ण नई-नई पुस्तकें बनाकर, उन्हे बुद्ध, पद्मसंभव या किसी और पुराने आचार्यके नामसे पत्थरो और जमीनसे खोदकर निकाल रहे थे। गतेर्-स्तोनने १११८ ई०मे और व्रिङ्-म-धर्माचार्य स-द्वङ्ने १२५६ ई०मे, ऐसे ही जाली ग्रथोको खोद निकाला था।

स्कर्-म-बक्-सिके मरने (१२८२ ई०)पर, उसके योग्य शिष्योमेसे न चुना जाकर, एक छोटा बालक रङ्-ऽब्युङ्-र्दो-र्जे (जन्म १२८४ ई०) उसका अवतार स्वीकार किया गया। इससे पूर्व यद्यपि एकाध ऐसे उदाहरण थे, किंतु अब तो अवतारी लामोकी बीमारीसी फैल गई। स्कर्-मकी देखा-देखी पीछे ऽब्रि-गुङ्-प, ऽब्रु-ग्-प आदि द्कर्-ग्युद्-प निकायोने इस प्रथाको अपनाया। आगे चलकर चोङ्-ख-पके अनुयायियोने भी अपने दलाई-लामा (र्ग्यल्-व-रिन्-पो-छे) और टशी लामा (पण्-छेन्-रिन्-पो-छे)के चुनावोमे ऐसा ही किया; और इस प्रकार आजकल छोटे-छोटे मठोसे लेकर बड़ी-बड़ी जागीरवाली महंतशाहियोकेलिए ऐसे हजारो अवतारी लामा तिब्बतमें पाए जाते है। इस प्रथाके इतने अधिक प्रचारका कारण क्या है? गद्दीधरके बाल्यकालमें कुछ स्वार्थियोंको मठका सारा प्रबध अपने हाथमें रखनेका मौक़ा मिलता है; और अवतारी लामाके माँ-बाप और सबंधियोकेलिए मठ एक घरकी संपत्तिसी बन जाता है। लेकिन इस प्रथाके कारण उत्तराधिकारकेलिए विद्या और गुणका महत्त्व जाता रहा, और फिर अधिकाश नालायक लोग इन पदोपर आने लगे।

बारहवी शताब्दीमे चौरासी सिद्धोके बहुतसे हिंदी दोहों और गीतोके भी भोट भाषामे अनुवाद हुए। इसी समय (शोङ्-सूतोन्) दों-र्जे-ग्यंल-मूछन् (मृत्यु ११७७ ई० ?)ने पंडित लक्ष्मीकरकी सहायतासे 'काव्यादर्श' (दंडी), 'नागानंद' (हर्षवर्द्धन), और 'बोधिसत्त्वावदानकल्पलता' (क्षेमेंद्र) ग्रंथोके भोट भाषामें भाषांतर किए।

अब मठोके हाथमे शासनका अधिकार आनेपर उन्होने भी वही करना शुरू किया, जो शासकोमे हुआ करता है। १२५२ ई०मे स-स्क्यवालोने भोटके तेरह प्रांतोपर अधिकार कर लिया। १२८५ ई०मे ऽब्रि-गोङ्के अधिकारियोने अपने विरोधी ब्य-युल् मठको जला डाला। १२९० ई०मे स-स्क्यवालोने ऽब्रि-गोङ्को लूट लिया।

(बु-सूतोन्) रिन्-छेन्-ग्रुब् (१२९०-१३६४ ई०)। तेरहवीं सदीके अतके साथ, भारतके बौद्ध केंद्रोसे बौद्धधर्मका अंत हो गया। अब भोट देशको सजीव बौद्ध-भारतसे विचारोके दाना-दानका अवसर न रह गया। भोटमे भी अब प्रभावशाली महत-शाहियोकी प्रतिद्वंद्विताका समय आरंभ हुआ। अबतक जितने भी भारतीय ग्रंथ भोट भाषामे अनूदित हुए थे, उनको क्रम लगाकर इकट्ठा संगृहीत करनेका काम नही हुआ था, इसलिए सारी अनुवादित पुस्तकोंका न किसीको पता था, और न वह एक जगह मिल सकती थी। ऐसे समय (१२९० ई०)में (बु-सतोन्) रिन्-छेन्-ग्रुबका जन्म हुआ। यह श-लु विहारमें

जाकर भिक्षु हुए। यह अपने ही समयके नहीं, बल्कि आज-तकके, भोट देशके अद्वितीय विद्वान् हुए। शुरूमे स-स्क्य मठमे भी यह अध्यापनका काम करते रहे, जिससे इन्हे वहाँके विशाल पुस्तकालयको देखनेका अवसर मिला। यद्यपि इन्होने 'कलाप-धातु-काय' (दुर्गसिंह), 'त्याद्यन्तप्रक्रिया' (हर्षकीर्ति) आदि कुछ थोड़ेसे ग्रन्थोके अनुवाद किए हैं; किंतु, इनका दूसरा काम बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इन्होने अपने समयतकके सभी अनुवा-दित ग्रथोको एकत्रितकर क्रमानुसार दो महान् संग्रहोमे जमा किया, यही स्क-ऽग्युर् (कन्-जुर्) और स्तन्-ऽग्युर् (तन्-जुर) हैं। इनमे स्क-ऽग्युरमे तो उन ग्रथोको एकत्रित किया, जिन्हे बुद्ध-वचन कहा जाता है। 'स्क' शब्दका अर्थ भोट भाषामे 'वचन' होता है। 'स्तन्'का अर्थ है शास्त्र, और 'ऽग्युर' कहते हैं, अनुवादको। स्तन्-ऽग्युर्मे बुद्ध-वचनसे भिन्न—आचार्योंके दर्शन, काव्य, वैद्यक, ज्योतिष, देवता-साधन, और स्क-ऽग्युर् तथा स्तन्-ऽग्युर्की टीकायें तथा कितने ही और ग्रथोकी टीकाएँ संगृहीत हैं। इन्होने इन सग्रहोको अपने ही तत्वावधानसे और एक निश्चित क्रमसे लिखवाकर अलग-अलग वेष्टनोमे विभक्त किया। साथ ही ग्रंथोकी सूची भी बनाई। यह मूल प्रति अब भी श-लु-विहारमे (जो कि ग्यॉंचीसे दो दिनके रास्तेपर है) मौजूद है। बु-स्तोन्ने स्वयं पचासो ग्रंथ लिखे, जिनमे एकमें भारत और भोट देशमे बौद्धधर्मके इतिहास (१३२२ ई०मे लिखित) का महत्त्वपूर्ण वर्णन है। १३६४ ई०मे श-लु-विहारमे इस महान्

विद्वान्के देहांतके साथ भोट देशके धार्मिक इतिहासके सबसे महत्त्वपूर्ण खडकी समाप्ति होती है।

स्-सक्य-युगके अंतमे (यर्-लुङ्) अगस्-प-र्ग्यल्-मृछन्, चंद्रगोमीके 'लोकानद' नाटक और कालिदासके 'मेघदूत' तथा कुछ और ग्रथोके अनुवादक ब्यङ्-छुप्-चे-मो (१३०३ ई०) जैसे कुछ और विद्वान् अनुवादक हुए।

५—चोङ्-ख-प-युग (१३७६-१६६४)

चोङ्-ख-प। बु स्तोन्के देहातके सात वर्ष पूर्व (१३५७ ई०मे) अम्-दो प्रांतके चोङ्-ख ग्राममे एक मेधावी बालक उत्पन्न हुआ जिसका भिक्षु नाम यद्यपि ब्लो-ब्सङ् ग्रग्स्-प (सुमतिकीर्ति) है, तो भी वह अधिकतर अपने जन्म-ग्रामके नामसे चोङ्-ख-प (चोङ्-ख-वाला) ही करके प्रसिद्ध है। अम्-दो ल्हासासे महीनोके रास्तेपर मंगोलियाकी सीमाके पास एक छोटा-सा प्रदेश है। चोङ्-ख-पके पूर्व यह प्रदेश अशिक्षित लोगोका ही निवास-स्थान समझा जाता था। सात वर्षकी अवस्था (१३६३ ई०)मे यह दोन्-रिन्-पका श्रामणेर बना। तबसे पद्रह वर्षकी अवस्थातक वही अध्ययन करता रहा। तब उसे विशेष अध्ययनके लिए अच्छे अध्यापकोकी आवश्यकता हुई, और १३७२ ई०में मध्य-भोटमे चला आया। उन्नीस वर्षकी छोटी अवस्था (१३७६ ई०)मे उसने अपना प्रथम ग्रथ लिखा। (रे-म्दऽ-प) ग्शोन-नु-ब्लो-ग्रोस्से इसने दर्शन-शास्त्र पढ़ा। "विनय"मे इसका गुरु बु-स्तोन्का शिष्य

(द्मर्-स्तोन्) ग्यें-म्छो-रिन्-छेन् था। चोङ्-ख-प बु-स्तोन्के ग्रंथोसे बहुत प्रभावित हुआ, और वस्तुतः उसके इतने महान् कार्य-को संपन्न करनेमे बु-स्तोन्के कार्यने बहुत-उत्साह प्रदान किया। उसको अफसोस था, कि क्यो न मुझे बु-स्तोन्के चरणोमें बैठकर अध्ययन करनेका सौभाग्य मिला। इसने स-स्क्य-प, द्कर्-ग्युद्-प और (दीपकरके अनुयायी) ब्कऽ-दम्-प तीनो ही संप्रदायोसे बहुतसी बातें सीखी। इसके अनुयायी अपनेको ब्कऽ-दम्पके अतर्गत मानकर अपनेको नवीन ब्कऽ-दम्-प कहते हैं। वस्तुतः जिस प्रकार ब्कऽ-दम्-प मठ स्वेच्छासे द्गे-लुग्स्-प (चोङ्-ख-पके सम्प्रदाय)मे परिणत हो गए, उससे उनका यह कहना अयुक्त भी नही है।

चोङ्-ख-पके जन्मसे दो वर्ष पूर्व (१३५४ ई०मे) फग्-ग्रुब्के (सि-तु) ब्यङ्-छुप्-ग्यंन् (जन्म १३०२ ई०)ने सारे ग्चङ् प्रदेश-पर अधिकार कर लिया था। १३४९ ई०मे उसने द्बुस् प्रदेशको भी अपने राज्यमे मिला लिया। इस प्रकार चोङ्-ख-पके कार्य-क्षेत्रमे पदार्पण करनेके समय मध्य-भोटमें एक सुदृढ़ शासन स्था-पित हो चुका था। किंतु धार्मिक स्थिति बहुत बुरी थी। बडे-बड़े विद्वान् एक एक करके चल बसे थे। पुराने विद्या-केंद्र अपना वैभव खो चुके थे। म्छन्-निद-प (दर्शनवादी) और ब्कऽ-दम्-प यद्यपि अब भी ज्ञान और वैराग्यकी ज्योति जलाए हुए थे, किंतु वह ज्योति पहाड़ोकी गुफाओ और देशके गुमनाम कोनोमें छिपी हुई थी। चोङ्-ख-पमे ज्ञान और वैराग्य, अथवा प्रज्ञा और

पंडित वनरत्न (१३८४-१४६८ ई०)। पंडित वनरत्न अंतिम भारतीय बौद्ध भिक्षु थे, जिन्होने भोटमें जाकर अनुवाद और धर्म-प्रचारका काम किया। इनका जन्म पूर्वदेश (बंगाल ?)के एक राजवंशमे हुआ था। इनके गुरुका नाम बुद्धघोष था। बीस वर्षकी अवस्थामे यह सिंहल चले गए, और वहाँ आचार्य धर्मकीर्ति*की शिष्यतामे भिक्षु हुए। छ वर्षोंतक वही अध्ययन करते रहे। फिर श्रीधान्यकटक होते हुए मगध देशमे आए। वहाँ हरिहर पंडितके पास 'कलाप' व्याकरण पढ़ा। फिर कई जगह विचरते हुए नेपाल पहुँचे। वहाँ पंडित शीलसागरके पास कुछ अध्ययनकर १४५३ ई०मे भोट देश आए। ल्हासा और थर्-लुङ्स्मे कितने ही समयतक रहकर, इन्होने कुछ तांत्रिक ग्रंथोके अनुवादमे सहायता की। फिर नेपाल लौटकर शांतेपुरी विहारमे ठहरे। दूसरी बार राजा (सि-तु) रब्-बर्त्तनके निमंत्रणपर फिर भोट देश आए। भोटराज ग्रग्स्-प-ऽब्युङ्-ग्नस्के समयमे राजधानी चेर्स-थङ्मे पहुँचे। कितने ही समय रहकर फिर नेपाल लौट गए, और वही १४६८ ई०मे इनका देहांत हुआ। इनके द्वारा अनुवादित ग्रंथोमे सिद्धोके कुछ दोहे और गीत भी हैं। (ऽगोस्-यिद्-ब्स-ङ्-च) गशोन्-नुद्-पल् (जन्म १३९२ ई०),

---

*शायद 'निकायसंग्रह'के कर्ता प्रसिद्ध राजगुरु धर्मकीर्ति

†ऽब्रुग्-प-पद्म-द्कर-पो (जन्म १५२७ ई०)—'छोस्-ऽब्युङ्' ९४

(स्तग्) शेस्-रब्-रिन्-छेन् (जन्म १४०५ ई०) और शेस्-रब्-ग्यंल् (१४२३ ई०) इनके सहायक लो-च-व थे।

(श-लु) धर्मपालभद्र (जन्म १५२७ ई०)। यही अंतिम विद्वान् लो-च-व थे। यह बु-स्तोन्‌के प्रसिद्ध श-लु-वेहारके भिक्षु थे। इन्होने 'अभिधर्मकोश-टीका' (स्थिरमति), 'ईश्वरकर्तृत्व-निराकृति' (नागार्जुन), 'मंजुश्रीशब्दलक्षण' (भव्यकीर्ति) आदि ग्रंथोके अनुवाद किए। इनसे पूर्व इसी श-लु-विहारके दूसरे विद्वान् लो-चव रिन्-छेन् ब्स-ङ् ।(१४८९-१५६३ ई०)ने भी कुछ ग्रथोके अनुवाद किए थे।

लामा तारानाथ (जन्म १३७५ ई०)। असली नाम ग्यंल्-खङ्-प कुन्-द्गऽ स्निङ्-पो था। यद्यपि इनका अध्ययन बु-स्तोन् या चोङ्-ख-पकी भाँति गभीर न था, तो भी यह बहुश्रुत थे। इन्होने बहुत-सी पुस्तकें लिखीं, जिनमें भारतमे बौद्धधर्मके इतिहास विषयकी भी एक है। सर्वप्रथम इसी इतिहासका एक युरोपीय भाषामे अनुवाद होनेसे तारानाथका नाम बहुत प्रसिद्ध है। इनके अनुवादित ग्रंथो मे अनुभूतिस्वरूपाचार्यका 'सारस्वत' भी है, जिसका इन्होने कुरुक्षेत्रके पंडित कृष्णभद्रकी सहायतासे अनुवाद किया था।

पन्द्रहवी शताब्दीका उत्तरार्द्ध और सोलहवी शताब्दी भोट देशमे भिन्न-भिन्न मठोकी प्रतिद्वंद्विताका समय था। यह प्रतिद्वंद्विता सशस्त्र प्रतिद्वंद्विता थी। १४३५ ई०मे फग्-ग्रु-ब् मठवालोने ग्चङ् प्रदेशको, रिन्-स्पुङ्‌वालोके हाथसे छीन लिया। १४८० ई०में

.श्व-दूमर् लामा (छोस्-ग्रग्स्-ये-शेस्—मृत्यु १५३४ ई० ?)ने ग्चङ्की सेना लेकर द्बुस-प्रदेशपर चढ़ाई की। १४६८ई०में रिन्-छेन्स्पुङ्-पोने ग्चङ्की सेना लेकर स्नेऽु-ग्रोंङ् और स्प्यिद्-शङ्पर अधिकार कर लिया। इसी वर्ष ग्सङ्-फु और स्कर्-म लामोने वार्षिक धर्म सम्मेलनके समय स-स्क्य-प और ऽब्रस-स्पुङ्के भिक्षुओंको अपमानित किया। १५१८ ई०तक—जब-तक कि ग्चङ्की शक्ति क्षीण न हो गई —ऽब्रस् सपुङ् और से-रके भिक्षु वार्षिक पूजा (स्मोन्-लम् छेन्-पो)में अपना स्थान प्राप्त न कर सके। १५७५ ई०मे रिन्-स्पुङ् (ग्चङ्)ने फिर द्बुस् से आकर लूटमार की। १६०४ ई०मे स्कर्-म सेनाने सूक्य-शोद् दुर्ग नष्ट कर दिया। १६१० ई०मे फिर ग्चङ्-सेनाने द्बुस्पर चढाई की। १६१२ ई०में स्कर्-म महतराज सारे ग्चङ्का शासक बन बैठा। १६१८ ई०मे ग्चङ्-सेनाने द्बुस्पर चढ़ाई-कर ऽब्रस्-स्पुङ् विश्वविद्यालयके हजारों भिक्षुओंको मार डाला।

ऊपरके वर्णनसे मालूम होगा, कि उस समय भोट देशके मठ, विद्वानों और विरागियोंके एकांत-चिंतनके स्थान न होकर सैनिक अखाडे बन गए थे। वस्तुत सोलहवीं, सत्रहवीं शताब्दियोंमें यह बात भारत और युरोपपर भी ऐसे ही घटती है। भारतमें भी इस समय सन्यासियों और वैरागियोंके अखाड़े और उनके नागे सैनिक ढंगपर सगठित ही न थे, बल्कि कुंभ और मेलोंपर इनकी आपसमें खूब मारकाट होती थीं। युरोपमें पोपके भिक्षुओंकी भी उस समय यही दशा थी। चोङ्-ख-पके अनुया-

यियोकी प्रशसामे यह बात जरूर कहनी पड़ेगी, कि १६४२ ई०-तक—जब कि भोटका राज्य उन्हे मंगोल शिष्यो द्वारा अर्पित किया गया—उन्होने शासन और राज्यमे दखल करनेका प्रयत्न नही किया। वह बराबर धर्म-प्रसार और विद्या-प्रचारमे लगे रहे। उनके ऽब्रस्-स्पुङ्, से-र. दूगऽ लूदन्, बूक्र शिस् ल्हुन्-पो, विहारोने विश्व-विद्यालयोका रूप धारण कर लिया था, जिनमे कि भोट देशके कोने-कोनेके ही नही, वल्कि सुदूर मगोलिया और साइवेरियातकके भिक्षु अध्ययनार्थ आने लगे थे। इन विश्वविद्यालयोके कामको देखकर धनी, गरीब सभी जनता दिल खोलकर उनकी सहायता कर रही थी। इनके छात्रावास प्रदेश-प्रदेशकेलिए नियत थे, जिनमें कुछ वृत्तियाँ भी नियत हो गई थी। अर्थ-हीन विद्यार्थी भी इन छात्रावासोमे रहकर अच्छी तरह विद्याध्ययन कर सकते थे, और विद्या-समाप्तिपर अपने देशमे जाकर अपनी मातृ-सस्था और दूगे-लुग्स्-प-सम्प्रदायके प्रति प्रेम और आदरका प्रसार करते थे। इतना ही नही, दूगे लुग्स-सम्प्रदायके नेताओने मगोलियामे स-सूक्य सघराजके धर्म-प्रचारके कार्यको जारी रक्खा। १५७७ ई०मे तीसरे दलाई लामा बूसोद्-नेम्स_ग्ये-म्छो धर्म-प्रचारार्थ स्वय मगोलिया गए। और मगोल-सर्दार अल्-तन्-ह्यान्ने (१५७८ ई०मे) उनका स्वागत किया। इस समयतक दूगे लुग्स्-प विश्वविद्यालयोके कितने ही मगोल स्नातक अपने देशमे फैल चुके थे। दूसरे वर्ष दलाई लामाने वहाँ थेग्-छेन्-छोस्-ऽखोर्-ग्लिङ्की स्थापना की। इस यात्रामे उन्होंने अम्-दो, खम्स आदिके महा-

विहारोका निरीक्षण किया, और कुछ नए विहार स्थापित किए। १५८८ ई०मे तृतीय दलाई लामाका देहांत हो गया।

चतुर्थ दलाई लामा योन्-तन्-ग्र्य-म्छो, १५८६ ई०में, मंगोल-वशमे ही पैदा हुआ। इन बातोने मंगोल-जातिका द्गे-लुग्स्-प संप्रदायसे घनिष्ट सबध स्थापित कर दिया। यही वजह हुई कि जब भोटके राज्यलोलुप मठोने द्गे-लुग्स्-पके प्रभावको बढ़ते देख उनसे भी छेड़खानी शुरू की, तो मंगोल वीरोने उनकी रक्षाके लिए अपना रक्त देना निश्चय कर लिया। १६१८ ई०मे ग्चङ्-सेनाका ऽब्रस्-सपुङ्के हजारो भिक्षुओको जानसे मारना मगोलो-केलिए असह्य हो गया। इस खबरके पातेही सारे मगोलियामे ग्चङ्के मठधारियोके खिलाफ क्रोधका समुद्र उमड़ पड़ा। उस समयतक मंगोल-वीर गु-श्री-खान् (१५८२-१६५४ ई०)की कीर्ति सारे मगोलियामे फैल चुकी थी। उसने मगोल-योद्धाओकी एक बड़ी सेना तैयारकर मध्य-तिब्बतकी ओर कूच कर दिया। ग्चङ्-वालोको मालूम होनेपर, वह भी उनसे लड़नेकेलिए आगे बढ़े। १६२० ई०मे ग्यङ्-थङ्-गङ्मे दोनो सेनाओकी मुठभेड़ हुई। बहुत-से भोटिया सैनिक मारे गए, किंतु उस वर्ष कोई आखिरी फैसला नही हुआ। दूसरे वर्ष (१६२६ ई०में) फिर वही युद्ध हुआ, और ग्चङ्-सेना बुरी तरहसे पराजित हुई। तो भी कुछ शर्तोंके साथ फिर राज्य द्गे-ग्रग्स्-पके हाथमे ही रहने दिया गया। लेकिन द्गे-लुग्स्-पको दबानेकी नीति न बदली। बल्कि द्गे-लुग्स्-पके इतने प्रबल पक्षपातियोको देखकर विरोधी और भी तेज हो उठे।

१६३७ ई०मे इसकेलिए दूगे-लुग्स्-विरोधिनी खल्-ख (मंगोल) जातिको गु-श्री-खान्ने को-को-नोर् झीलके पास युद्ध करके परास्त किया, और वहाँसे द्बुस् प्रदेश (ल्हासा-वाले प्रांत)मे आकर, फिर को-को-नोर लौट गया। १६३६ ई०मे बौद्ध-विरोधी बोन्-धर्मानुयायी खम्स्के शासक वे-रिसे युद्ध हुआ। वह राज्यसे वंचितकर कैद कर लिया गया, और दूसरे वर्ष उसके अत्याचारोकेलिए उसे मृत्यु-दंड दिया गया। ग्चङ्वालोकी शरारत अभी कम न हुई थी, इसलिए १६४२ ई०मे गु-श्रीने ग्चङ्पर चढ़ाई करके राजाको पकड़कर, ग्चङ् और कोङ्-पो प्रदेशोको अपने अधिकारमे कर लिया। गु-श्री-खान्ने सारे विजित राज्यको पंचम दलाई लामा ब्लो-ब्सङ्-र्ग्य-म्छोके चरणोमे अर्पण किया, और उनकी तरफसे प्रबधकेलिए वह भोटका राजा उद्घोषित हुआ। इस प्रकार भोटमे धर्माचार्योंका दृढ शासन स्थापित होकर अबतक चला जा रहा है।

(र्ग्यल्-व) ब्लो-ब्सङ्-र्ग्य-म्छो (१६१७-८२ ई०)। चौथा दलाई लामा मगोल जातिका था, यह पहले कह आए हैं। १६१६ ई०मे उसकी मृत्युके बाद, उसका अवतार समझा जानेवाला पाँचवाँ दलाई लामा पैदा हुआ। यह अभी दो वर्षका ही था, तभी ग्चङ् सेनाने ङे-पुङ्के हजारो भिक्षुओको मारा था। छ वर्षकी अवस्था (१६२२ ई०)मे यह ऽब्रस्-स्पुङ् (ङे-पुङ्)का नायक उद्घोषित हुआ। जब अवतारसे सब काम होनेवाला है, तब योग्यता और आयुका विचार करनेकी क्या आवश्यकता ?

१६३८ ई०मे ब्क्र-शिस्-ल्हुन्-पो विहारके नायक पण्-छेन् (महा-पंडित) छोस् क्यि-ग्र्यल्-म्छन् (१५७०-१६६२ ई०)से इसने भिक्षु-दीक्षा ग्रहण की।

मगोल-सर्दारने चोङ्-ख-पसे गद्दीधर गन्दन्-ठी-पाको राज्य न प्रदानकर, क्यो दलाई लामाको दिया, इसका कारण स्पष्ट है मंगोलियामे धर्म-प्रचारकेलिए तीसरा दलाई लामा गया था, और चौथा दलाई लामा स्वय मगोल था, इस प्रकार वह दलाई लामासे ही अधिक परिचित था। भोटिया लोग दलाई लामाकी जगहपर ग्र्यल्-व-रिन्-पो-छे (जिन-रत्न) शब्दका प्रयोग करते हैं। दलाई लामा यह मगोल लोगोका दिया नाम है। मगोल भाषा में त-ले सागरको कहते है। पहिलेको छोड़कर बाकी सभी दलाई लामोके अतमे ग्र्य-म्छो (सागर) शब्दका प्रयोग होता है, इसीलिए मगोल लोगोने त-ले-लामा कहना शुरू किया, जिसका ही बिगडा रूप दलाई लामा है। टशी (ब्क्र-शिस्) लामाको भोट भाषामे पण्-छेन्-रिन्-पो-छे (महापंडित-रत्न) कहते है। पचम दलाई लामा सुमतिसागरके गुरु पण-छेन्-छोस्-क्यि-ग्यल्-म्छन्से पूर्व वहाँ अवतारकी प्रथा न थी। किंतु पचम दलाईके गुरु होनेसे उनका सम्मान बहुत बढ़ गया; और मृत्युके बाद उनकेलिए भी लोगोने अवतारकी प्रथा खड़ी कर ली। वर्तमान टशी-लामा (पण्-छेन्)-छोस्-क्यि-ञि-म (धर्मसूर्य) उनके पाँचवें अवतार हैं। पचम दलाई लामा सुमतिसागर यद्यपि अवतार समझे जानेके कारण उस पदपर पहुँचे थे, तो भी वह बड़े कार्यपटु शासक थे।

इनके शासनके समयमे ही १६४४ ई०मे मिङ्-वशको हटाकर मंचू-सर्दार सुन्न्-ति-छि-थे-चुङ् चीनका सम्राट् बना। दूसरे साल १६४५ ई०मे दलाई लामाने पोतलाका महाप्रासाद बनवाया। १६५२ ई०मे चीन-सम्राट्के निमन्त्रणपर वह चीन गए; और सम्राट्ने उन्हे ता-इ-श्रीकी पदवीसे विभूषित किया। यह सारी अभ्यर्थना चीन-सम्राट्ने शक्तिशाली मंगोल जातिको अपने पक्षमे करनेकेलिए की थी, जिनपर दलाई लामाका बहुत अधिक प्रभाव था। १६५४ ई०मे गु-श्री-खान्के मरनेपर, उसका पुत्र त-यन् खान् (१६६० ई०) भोटका राजा बनाया गया। उसके भी मरनेपर त-ले-खान्-रत्न भोटका राजा बना।

पचम दलाई लामाको भी धर्म-प्रचारकी लगन थी। वह चीनसे लौटते हुए स्वय इसकेलिए बहुतसे प्रदेशोमे गए। उन्होने एक होनहार भिक्षु फुन्-छोग्स्-ल्हुन-ग्रुब्को संस्कृत पढ़नेकेलिए भारत भेजा। इसने कुरुक्षेत्रके पडित गोकुलनाथ मिश्र और पंडित बलभद्रकी सहायतासे रामचद्रकी पाणिनि-व्याकरणकी 'प्रक्रिया-कौमुदी' (१६५८ ई०) और 'सारस्वत'का (१६६५ ई०) भोट भाषामे अनुवाद किया। गौतमभारती, ओंकारभारती और उत्तमगिरि नामक रमते साधुओकी सहायतासे (१६६४ ई०मे) इसने एक वैद्यकग्रंथका भी अनुवाद किया। यही भोटका अतिम अनुवादक था। १६८२ ई०मे पाँचवे त-ले-लामाकी मृत्यु हुई।

६—अंतिम-युग (१६६४—)

छङ्स्-द्ब्यङ्स्-र्ग्य-म्छो (१६८३-१७०५ ई०)। पचम दलाईकी

मृत्युके बाद ब्रह्मघोप-सागर उसका अवतार समझा गया। यह बड़ी ही रँगीली तबियतका आदमी था। वस्तुतः यह भिक्षु बननेके लिए नही पैदा हुआ था। लेकिन क्या करे? १७०२ ई०मे इसने भिक्षु व्रत तोड दिया। लोगोमे तहलका मच गया। और इसके फलस्वरूप ल्ह-ब्सङ्ने सरकारी सेनाको परास्तकर १७०५ ई०में अपनेको भोटका राजा उद्घोषित किया। हालत और भी खराब हुई होती, किंतु जिस वक्त छठाँ दलाई ब्रह्मघोप-सागर चीन जा रहा था, रास्तेमे कोकोनोर झीलके पास उसकी मृत्यु हो गई। इधर एक दूसरे ही व्यक्ति पद्-द्कर्-ऽज़िन्-ये-शेस्-ग्यं-म्छो (पुंडरीकधर ज्ञानसागर)को पाँचवे दलाई लामाका असली अवतार बनानेका उपक्रम हो चुका था, किंतु ब्रह्मघोषके मर जानेसे इसकी जरूरत न रही। १७०८ ई०मे स्कल्-ब्सङ् ग्यं-म्छो पैदा हुए, जो छठे दलाईके अवतार माने गए।

ल्ह-ब्सङ्के स्वतंत्र राजा बन जानेकी सूचना, जब मंगोलियामें पहुँची, तो वहाँ फिर तैयारी होने लगी, और १७१७ ई०मे छुङ्-गर् (मंगोलोकी बाईं शाखाकी) सेना भोटकी तरफ रवाना हुई। एक प्रचंड तूफानकी भाँति, इसके रास्तेमें जो कोई विरोधी आया, उसका इसने सत्यानाश किया। ल्हासाके उत्तर तरफके मैदानमें ल्ह-ब्सङ्ने इसका सामना किया, और लडाईमे काम आया। ञिङ्-म-लामोने ल्ह-ब्सङ्का पक्ष लिया था, इसलिए छुङ्-गर् सेनाने उनके मठोको ढूँढ़-ढूँढकर जलाया, और नष्ट किया। उनके र्शम्-ग्यल्-ग्लिङ्, र्दो-र्जे-ब्रग् और स्मिन्-ग्रोल-

ग्‌लिङ्‌ मठ लूट लिए गए। छुङ्‌गर्‌के प्रलयकारी कृत्यके चिन्ह-स्वरूप, आज भी भोट देशमे सैकड़ो खंडहर जगह-जगह खड़े दिखाई देते हैं। इस प्रकार मंगोलोंकी सहायतासे फिर दलाई लामाको राज्य-शक्ति प्राप्त हुई। सातवें दलाई लामा स्‌कल्‌-ब्‌सङ्‌-ग्यं-मछो (भद्रसागर) बड़े ही विरागी पुरुष थे। ये राज्य कार्यकी अपेक्षा ज्ञान-ध्यानमे अपना सारा समय लगाते थे। इनके कालमे १७२७ ई०मे एक बार फिर कुछ मंत्रियोने बग़ावत की। उस समय (फो-ल-थे-जे) ब्‌सोद्‌-नम्‌स्‌-स्‌तोब्‌-ग्यंस्‌—जिसे राजा मि-द्‌वङ्‌ भी कहते हैं—ने म्‌ङऽ-रिस्‌ और ग्‌चङ्‌की सेनाओकी सहायतासे उन्हे परास्त कर दिया। इस सेवाकेलिए मि-द्‌वङ्‌ १७२८ ई०मे भोटका उपराज बनाया गया। इसी मि-द्‌वङ्‌ने सर्वप्रथम सक्‌-ऽग्युर और सूतन्‌-ऽग्युर दोनो महान्‌ ग्रंथ-संग्रहोको लकडीपर खुदवाकर छापा बनवाया, और उसे सूनर्‌-थङ्‌-विहारमे रक्खा। इस मशहूर छापेके छपे कितने ही कन्‌-जुर्‌, तन्‌-जुर आज दुनियाके पुस्तकालयोमे पाए जाते हैं।

सातवें दलाईके समयमे रोमन-कैथोलिक साधु कैपुचिन फादर्स* ल्हासामे गए, और १७०८ ई०तक ईसाई-धर्मका प्रचार करते रहे। इनसे पहले १६२६ ई०मे पोर्तगीज जेसुइट्‌ पाद्री अंद्रेदाने तिब्बतमे प्रवेश किया था, किंतु वह ल्हासा या ब्‌क्र-शिस्‌-ल्हुन्‌-पोतक नही पहुँच सका था।

---

*Capuchin Fathers

आठवें दलाई लामाके समयमे कोई प्रसिद्ध घटना नही हुई। नवें (११ वर्ष), दसवें (२३ वर्ष), ग्यारहवें (१७ वर्ष), और बारहवें (२० वर्ष) दलाई लामा बहुत थोड़ी ही थोड़ी उम्रमें मर गए। लोगोका कहना है, कि प्रबंधकोने अधिकार हाथसे न जाने देनेकेलिए, उन्हे खतम कर दिया। इसके बाद वर्तमान तेरहवें दलाई लामा थुव्-स्तन्-ग्यं-म्छो (मुनिशासनसागर जन्म १८७६ ई०) ही दीर्घजीवी हुए। अभी पिछले महीनेमें ही इनकी मृत्युका समाचार प्राप्त हुआ है।

१७७९ ई०मे तीसरे टशी लामा द्पल् लद्न्-ये-शेस् (ज-१७४० ई०) चीन-सम्राट्के निमत्रणपर पेकिन् गए थे; वहाँ इनका वड़ा स्वागत हुआ था, किंतु वही चेचकसे इनका देहांत हो गया।

१८४० ई०मे कुछ रोमन कैथोलिक पादरी ल्हासामे दो ढाई मास रहे थे।

१९०४ ई०मे लार्ड कर्जनने कुछ व्यापारिक शर्तोंको मनवाने तथा रूसके प्रभावको भोटमे न बढ़ने देनेकेलिए सशस्त्र मुहिम भेजी। ल्हासा अंग्रेजोके हाथमे आ गया, किंतु पीछे रूसी और अंग्रेज़ी सरकारोमे समझौता हो गया, जिससे तिब्बत फिर पूर्ववत् रहने दिया गया। बीचमें चीन और तिब्बतमे मतभेद हो जानेसे दलाई लामाको भारत चला आना पड़ा था; किंतु १९१२ ई०मे चीनकी राज्य-क्रांतिके समय मौका मिल गया, और

भोट सैनिकोंने चीनी अधिकारियोंको भोटसे निकाल बाहर किया। दलाई लामा फिर तिब्बत लौट गए थे।

पाँचवें दलाई लामाके बाद धार्मिक क्षेत्रमे भोटने कोई विशेष कार्य न किया। डे-पुङ्, से-र आदि बड़े-बड़े द्गे-लुग्स्-प विहार अब भी बड़ी-बड़ी शिक्षण-संस्थायें हैं; और कितने ही काम पूर्ववत् चले आते हैं, तो भी धार्मिकक्षेत्रमे नवजीवनकी बहुत कमी है।

—:o:—

परिशिष्ट

१—भोटदेशीय सम्वत्सरचक्रका आरम्भ
२— ,, संवत्सरचक्र
३— ,, मासोके नाम
४— ,, अधि-मासवाले वर्ष और मास
५—स-स्क्य मठके संघराज
६—कर्-मके संघराज
७—चोड्-ख-पकी गद्दीके मालिक संघराज
८—बौद्ध विद्वान् और उनके आश्रयदाता आदि
९—भारतीय ग्रन्थोके कतिपय तिब्बती-अनुवादक, उनके सहायक, ग्रन्थ आदि
१०—तिब्बती सम्राटोका समय
११—तिब्बती राजवंश
१२—ञिड्-म सम्प्रदायकी परम्परा
१३—तिब्बतमे भारतीय शास्त्रकी परम्परा
१४— ,, चौरासी सिद्धो की परम्परा
१५—द्रुकऽ ग्यंद्-प सम्प्रदायकी परम्परा और शाखाएँ
१६—स-स्क्य वंशवृक्ष
१७—द्गेलुग्-स् सम्प्रदायकी परम्परा
१८—तिब्बतमे बौद्धधर्मसे सम्बद्ध कुछ खास नाम और तिथियाँ

१—भोटदेशीय संवत्सर-चक्र (रब्-ऽब्युङ्)का आरंभ*

रब्-ऽब्युङ्	ईस्वी सन
१	१०२७
२	१०८७
३	११४७
४	१२०७
५	१२६७
६	१३२७
७	१३८७
८	१४४७
९	१५०७
१०	१५६७
११	१६२७
१२	१६८७
१३	१७४७
१४	१८०७
१५	१८६७
१६	१९२७

*आज कल (सवत् १९९०)में सोलहवें रब्-ऽब्युङ्का—जो कि माघ सवत् १९८३में आरभ हुआ था—सातवाँ जल-(स्त्री) पक्षी वर्ष चल रहा है।

२—*भोटदेशीय संवत्सर-चक्र (रब्-ऽब्युङ्)¶

(स्त्री) शश	(पुरुष) नाग	(स्त्री) सर्प	(पुरुष) अश्व	(स्त्री) मेष	(पुरुष) वानर
अग्नि (प्रभव) १	भूमि, भू. विभव २	भूमि (शुक्ल) °मूष ३	लोह (प्रमोद) ४	लोह (प्रजापति) ५	जल (अंगिरा) °अश्व ६
भूमि (प्रमाथी) १३	लोह विक्रम °वानर १४	लोह (वृष) १५	जल (चित्रभानु) १६	जल (सुभानु) °नाग १७	द्रुम (तारण) १[illegible]
लोह (खर) °अश्व २५	जल (नन्दन) २६	जल (विजय) °नाग २७	द्रुम (जय) २८	द्रुम (मन्मथ) २९	अग्नि (दुर्मुख) °शूकर ३[illegible]
जल (शोभन) ३७	द्रुम (क्रोधी) °मूष ३८	द्रुम (विश्वावसु) ३९	अग्नि (पराभव) ४०	अग्नि (प्लवंग) °पक्षी ४१	भूमि (कीलक) ४२
द्रुम (राक्षस) °श्व ४९	अग्नि (नल) ५०	अग्नि (पिंगल) ५१	भूमि (कालमुक्त) °मेष ५२	भूमि (सिद्धार्थ) ५३	लोह (रौद्र) ५४

*संवत्सरका नाम बनानेमें (स्त्री) शश, (पुरुष) नाग आदि बारहों नामोंको उनके नीचेके कोष्ठकोंके साथ जोड़ दिया जाता है, जैसे—अग्नि (स्त्री) शश, भूमि (पुरुष) नाग। (स्त्री) (पुरुष)को कभी छोड़ भी दिया जाता है, और कभी-कभी भूमि आदि पाँचों नाम भी छोड़ दिए जाते हैं।

¶ क्लोङ्-र्दल्-(जन्म १७१९ ई०) गसु-बु म पृष्ठ १६ ख। ° अधिक मास-वाले वर्ष और मास, स-स्क्य-(ग्रग्स्-प-र्ग्यल्-म्छन्, (११४९-१२१६ ई०) ब्रक-बु, त, पृष्ठ २०३ ख

(स्त्री) पक्षी	(पुरुष) श्वा	(स्त्री) शूकर	(पुरुष) मूषक	(स्त्री) वृष	(पुरुष) व्याघ्र
जल (श्रीमुख) ७	द्रुम (भाव) ८	द्रुम (युवा) °शश ९	अग्नि (धाता) १०	अग्नि (ईश्वर) °शूकर ११	भूमि (बृहधान्य) १२
द्रुम (पार्थिव) °वृष १९	अग्नि (व्यय) २०	अग्नि (सर्वजित्) २१	भूमि (सर्वधारी) °वृष ··२२	भूमि (विरोधी) २३	लोह (विकृत) २४
अग्नि (हेमलंब) ३१	भूमि (विलंब) ३२	भूमि (विकारी) °मेष ३३	लोह (शर्वरी) ३४	लोह (प्लव) ३५	जल (शुभकृत्) ३६
भूमि (सौम्य) ४३	लोह (साधारण) °सर्प ४४	लोह (विरोधकृत्) ४५	जल (परिधावी) ४६	जल (प्रमादी) °अश्व ४७	द्रुम (आनंद) °व्याघ्र ४८
लोह (दुर्मति) °शश ५५	जल (दुन्दुभि) ५६	जल (रुधिरोद्-गारी) °पक्षी ५७	द्रुम (रक्ताक्षी) ५८	द्रुम (क्रोधन) ५९	अग्नि (क्षय) °वृष ६०

° अधिक मासवाले वर्ष और मास, स-स्-क्य (ग्रग्स्-प-ग्र्यल्-म्छन्, ११४६-१२१६ ई०) व्र्कं-बुं, त, पृष्ठ २०३ ख

३—भोटदेशीय मासों के नाम*

भोटदेशीय				भारतीय
संख्या	नाम	ऋतुओंके अनुसार नाम	ऋतु	नाम
१	नाग	अंत	हेमत	माघ
२	सर्प	आदि	ग्रीष्म	फाल्गुण
३	अश्व	मध्य	,,	चैत्र
४	मेष	अंत	,,	वैशाख
५	वानर	आदि	शरद्	ज्येष्ठ
६	पक्षी	मध्य	,,	आषाढ़
७	श्वा	अंत	,,	श्रावण
८	शूकर	आदि	शिशिर	भाद्रपद
९	मूषक	मध्य	,,	आश्विन
१०	वृष	अंत	,,	कार्तिक
११	व्याघ्र	आदि	हेमंत	मार्गशीर्ष
१२	शश	मध्य	,,	पौष

*भोटदेशीय प्रथम मास माघ सुदी प्रतिपद्से आरंभ होता है। मास-गणना अमावस्यात है, किंतु अधिक मासके एक साथ न पड़नेके कारण भारतीय मासोंसे मिलान नहीं रहता।

४—प्रत्येक रब्-ऽव्युङ् में अधि-मासवाले वर्ष और मास*

वर्ष-संवत्			मास	
संख्या	भोट नाम	भारतीय नाम	संख्या	नाम
३	भूमि-(स्त्री) सर्प	शुक्ल	९	मूषक
६	जल-(पुरुष) वानर	अंगिरा	३	अश्व
९	द्रुम-(स्त्री) शूकर	युवा	१२	शश
११	अग्नि-(स्त्री) सर्प	ईश्वर	८	शूकर
१४	लोह-(पुरुष) नाग	विक्रम	५	वानर
१७	जल-(स्त्री) मेष	सुभानु	१	नाग
१९	द्रुम (स्त्री) पक्षी	पार्थिव	१०	वृष
२२	भूमि·(पुरुष) मूषक	सर्वधारी	१०	वृष
२५	लोह (स्त्री) शश	खर	३	अश्व
२७	जल·(स्त्री) सर्प	विजय	१	नाग
३०	अग्नि·(पुरुष) वानर	दुर्मुख	८	शूकर
३३	भूमि·(स्त्री) शूकर	विकारी	४	मेष
३८	द्रुम (पुरुष) नाग	क्रोधी	९	मूषक

*स-स्क्य- (ग्रगस् प-ग्र्यल्-म्छन् ११४६-१२१६ ई०), त, पृष्ठ २०३ ख

वर्ष-सवत्			मास	
सख्या	भोट नाम	भारतीय नाम	संख्या	नाम
४१	अग्नि (स्त्री) मेष	प्लवग	६	पक्षी
४४	लोह (पुरुष) श्वा	साधारण	२	सर्प
४७	जल (स्त्री) वृष	प्रमादी	३	अश्व
४८	द्रुम (पुरुष) व्याघ्र	आनंद	११	व्याघ्र
४९	द्रुम-(स्त्री) शश	राक्षस	७	श्वा
५२	भूमि (पुरुष) अश्व	कालमुक्त	४	मेष
५५	लोह (स्त्री) पक्षी	दुर्मति	१२	शश
५७	जल (स्त्री) शूकर	रुधिरोद्गारी	६	पक्षी
६०*	अग्नि (पुरुष) व्याघ्र	क्षय	१०	वृष

*भोट पचागमें प्रति तीसरे वर्ष अधिमासका नियम नहीं है, जैसा कि इस कोष्ठकसे मालूम होगा

५—स-स्क्य मठ (स्थापित १०७३ ई०)के संघराज

स-स्क्यके पाँच प्रधान गुरु

सख्या	नाम	जन्म	गद्दी	मृत्यु
	*(ऽखोन्)-द्कोन्-ग्यॅल्	१०३४ ई०	१०७३	११०२
	*व-रि-लो-च-व		११०२	(११११)
¶१	(स-छेन्) कुन्-द्गऽ-स्निङ्-पो	जल-वानर १०९१	११११	भू-व्याघ्र ११५८ ई०
†२	(सलोव्-द्पोन्) ब्सोद्-नम्स-च-मो	जल-श्वा ११४२	(११५८)	जल-व्याघ्र ११८२
‡३	(जें·ब्-चुन) ग्रग्स्-प ग्यॅल्-म्छन्	अग्नि·शश ११४७	(११८२)	अग्नि-भूषक १२१६
§४	(स-पण्) कुन्-द्गऽ-ग्यॅल्-म्छन्	जल-व्याघ्र ११८२	(१२१६)	लोह-शूकर १२५१
§५	(ऽफग्स्-पो-ब्लो-ग्रोस्-ग्यॅल्-म्छन्	१२३४	(१२५१)	१२७६

*'जर्नल अव् दि बंगाल एशियाटिक सोसायटी', (१८८६)में श्री शरच्चंद्रदासका लेख

¶स-स्क्य-ब्कं-ऽबुं, क, ख   †स-स्क्य-ब्कं-ऽबुं, ग, ङ, च,
‡वही, छ, ज, त   §वही, थ, द, न   §वही, प, फ, ब

संख्या	नाम	जन्म	गद्दी	मृत्यु
*६	धर्मपालरक्षित	१२६८	१२८०	१२८८
ग*७	(शर्-व) ऽजम्-द्ब्यङ्स्-दोन्-ग्र्यन्	१२७६	१२८८	
*८	दम्-प-ब्सोद्-नम्स्-ग्र्यल्म्-छ्न्	१३११	१३४२	

* 'जर्नल अव् दि बंगाल एशियाटिक सोसाइटी', (१८८६)में श्री शरच्चन्द्रदासका लेख।

६— ❋कर्-म-संघराज

संख्या	नाम	जन्म	मृत्यु	विशेष
	नारोपा (विक्रम शिला)		१०४०ई०	
	मर्-व-छोस्-क्यि-ब्लो-ग्रोस्§			
	मि-ल-रस्-प§	१०४०	११२३	११९० ई०में-मर्-पके पास गया।
	स्गम्-पो-(द्वगस्-पो)$ ल्ह-र्जे	१०७९	११५३	
	(कर्-म) ऽदुस्-ग्सुम्-म्ख्येन्-प†	१११०	११९३	
	,, रस्-छेन्§			

❋'जर्नल अव् दि बंगाल एशियाटिक सोसाइटी' (१८८९) जिल्द ५८ (१) और क्लोङ्-र्दल्-ग्सु-ऽभु, छ, पृष्ठ ८ कके आधार पर

$द्वग्स्-पो मठ ११२१ ई०में स्थापित किया

†इसने निम्न मठोंको स्थापित किया—ग्शु-म्छुर्-ल्ह-लुङ् (११५४ ई०), म्छुर्-फु (११५९ ई०), कम्-पो-ग्नस्-मङ् (११६४ ई०), ऽदोद्-स्पङ्-फुग् (११६६ ई०), कर्-म-ल्ह-ल्देङ् (११८५ ई०)। ११३९ ई०में स्गम्-पोके पास गया

§यहाँ तक शिष्य उत्तराधिकारी होता रहा, पीछे अवतारी उत्तराधिकारी बनने लगा

संख्या	नाम	जन्म	मृत्यु	विशेष
१	(कर्-म-)स्वोम्-ब्रग्-ब्सोद्-दोर्	११७०	१२४८	
२	,, बक्-सि-छोस्-ऽज़िन्§	१२०४	१२८३	अवतारी (टुल्-कु)
३	,, रङ्-ऽब्युङ्-दों-जें	१२८४	१३३६	
४	,, रोल्-व-दों-जें	१३४०	१३८३	
५	,, दे-ब्शिन्-ग्शेग्स्-प	१३८४	१४१५	
६	,, म्थोङ्-व-दोन-ल्दन्	१४१६	१४५३	
७	,, छोस्-ग्रग्स्-ग्यं-म्छो	१४५४	१५०६	
८	,, मि-ब्स्क्योड्-दों-जें	१५०७	१५५४	
९	,, द्बङ्-फ्युग्-दों-जें	१५५६	१६०१	
१०	,, छोस्-द्ब्यिङ्स्-दों-जें	१६०४	१६७३	

§यहाँ तक शिष्य उत्तराधिकारी होता रहा, पीछे अवतारी उत्तराधिकारी बनने लगा।

७—चोङ्-ख-पकी गद्दीके मालिक

द्गऽ-ल्दन्-संघराज

नाम	जन्म	गद्दी	मृत्यु
चोङ्-ख-प			१४१९ ई०
धर्म रिन्-छेन्		१४१९	(१४३१)
म्खस-ग्रुब्-जें		१४३१	१४३८
ब्लो-ग्रोस्-छोस्-स्क्योङ्			१४६२
(ब-सो) छोस्-ग्यंन्		१४६२	१४७३
ब्लो-ब्र्तन्		१४७२	१४७८
स्मोन्-लम्-द्पल्			१४९१
ब्लो-ब्सङ्-ञि-म	१४३९	१४९०	१४९२
वे-ब्सङ्			१४९८
ऽदर्-स्तोन्		१५००	१५११
रिन्-ऽोद्-प	१४५३	१५१७ ?	१५४०
शेस्-रब्-लेग्स्-ब्लो	१४५०		१५२९
ब्सोद्-ग्रग्स्-प	४१७८	१५२९	१५५४
छोस्-स्क्योङ्-ग्ये म्छो	१४७३	१५३५	१५३९
(मि-ञग्)दोर्-ब्सङ्	१४९१	१५३९	१५५३

नाम	जन्म	गद्दी	मृत्यु
छोस्-ब्शेस्	१४५३		१५४०
*ग्यन्-ब्सङ्	१४६७		
ङग्-द्बङ् छोस्-ग्रग्स्	१५०१	१५४८	१५५०
(ऽोल्-द्गऽ) द्गे-लेग्स्-द्पल्	१५०५	१५५८	१५६७
छोस्-ग्रग्स्-ब्सङ्	१४६३		१५५६
द्गे-ऽदुन्-ब्सतन्-दर्	१४६३	१५६४	१५६८
छे-तन्-ग्र्य-म्छो	१५२०	१५६८	१५७७
व्यमस्-प-ग्र्य-म्छो	१५१६	१५७५	१५६०
द्पल्-ऽब्योर्-ग्र्य-म्छो	१५२६	१५८२	१५६६
दम्-छोस्-(द्पल्-ऽबर्)	१५२३	१५८६	१५६६
द्गे-ऽदुन्-ग्र्यल्-म्छन्	१५३२		
सङ्स्-ग्र्यस्-रिन्-छेन्	१५४०	१५६६	१६१२
ङग्-ग्र्यन्		१६०३	१६०७
छोस्-ब्येर्-ब्शेस्-ग्ब्येन्-ग्रग्स्	१५४६	१६०७	१६१८
(स्तग्-ग्रग्) ब्लो-ग्र्य-म्छो	१५४६	१६१५	१६१८
दम-छोस्-द्पल्	१५४६	१६१८	१६२१
(छुल्-ख्रिम्स्) छोस्-ऽफेल्	१५६१	१६१६	१६२३
ग्रग्स्-प-ग्र्य-म्छो	१५५५	१६२३	१६२३

---

*यह नाम क्लोड् र्दल् (जन्म १७१६ ई०) ग्सुं-ऽबुम् च पृष्ठ ७१ खसे लिए गए हैं । बाकी रायबहादुर शरच्चन्द्रदासके लेखसे

नाम	जन्म	गद्दी	मृत्यु
(ङग्) छोस्-क्यि-ग्यंल्-म्छ.न्			
द्कोन्-म्छोग्-छोस्-ऽफेल्	१५७३	१६२६	१६४६
(कोङ्-पो) ब्स्तन्-ऽजिन्-लेग्स्-ब्शद्		१६३७	
जें-द्गे		१६३७	
(द्वग्स-पो) ब्स्तन्-प-ग्यंल्-म्छन्		१६४३	१६४७
द्कोन्-म्छोग्-छोस्-ब्स.ङ्		१६४८	१६७३
द्पल्-ल्दन्-ग्यंल्-म्छन्		१६५४	
ब्लो-ब्स.ङ्-ग्यल्-म्छन्		१६६२	१६७२
ब्लो-ब्सङ्-दोन्-योद्	१६०२	१६६८	१६७८
* ब्लो-ब्स.ङ्-नंम्-ग्यंल्			
ग्यम्स्-प-ब्क्र-शिस्	१६१८	१६७५	१६८४
ब्लो-ब्स.ङ्-नोर्-बु			
क्लु-ऽबुम्-ग्यं-म्छो		१६८२	
†ब्लो-ग्रोस्-ग्यं-म्छो	१६३५	१६८५	१६८८
(चो-नस्)स्.छुल-ख्रिम्स्-दर्-ग्यं	१६३२	१६८५	
(ब्सम्-ब्लो) ञियन्-प-ग्यं-म्छो		१६६२	
(चो-नस्) छुल्-दर्		१६६५	
दोन्-योद्-ग्यं-म्छो		१७०१	

*यह नाम क्लोङ्-र्दल् (जन्म १७११ ई०) ग्सु-ऽबु च् पृष्ठ ७१ खसेलिए गए हैं। बाक़ी राय वहादुर शरच्चंद्रदासके लेखसे।

†१६८७में यह चीन-सम्राट्के पास पेकिन् गए

* द्पल-ऽब्योर्-ग्यॅल्-मृछ्न्

* दोन्-ग्रुब-ग्यॅ-म्छो

* (ब्य-ब्रल्) द्गे-ऽदुन्-फुन्-छोग्स्

* ङग्-द्वङ्-मृछोग्-ल्दन



---

*यह नाम क्लोङ्-र्दल् (जन्म १७१६ ई०) ग्सुं-ऽबुं च पृष्ठ ७१ खसे लिए गए हैं। बाकी राय बहादुर शरच्चद्रदासके लेखसे।

८—बौद्ध विद्वान् और उनके आश्रयदाता आदि

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पण्डित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		आरंभ-युग (६४०-८२३)	
६३०-९८	स्रोङ्-ब्चन्-स्गम्-पो	देवविद्यासिंह शंकर (ब्राह्मण) शीलमजु (नेपाली)	थोन्-मि अ-नु-इ-बु धर्मकोप (ह्वशङ्) महादेव (ल्ह-लुङ्) दों-र्जे-द्पल्
७३०-८०२	(ख्रि) ल्दे-ग्चुग्-ब्र्तन्		(व्लन्-क) मूलकोष (ङग्) ज्ञानकुमार
		शांतरक्षित-युग ८२३-१०४२	
८०२-८४५	(ख्रि) स्रोङ्-ल्दे·ब्चन्	अनत शांतरक्षित पद्मसभव कमलशील सुरेंद्राकर प्रभ	सङ्-शि (चीनी) मे (चीनी) गो (चीनी) द्पल् ग्यि-सेङ्गे ये-शेस्-द्वङ्-पो (लो) ज्ञानकुमार

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पण्डित	लो-च्-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		शीलधर्म (ली)	
		धर्मकीर्ति	(स्न-नम्) दों-र्जे-ब्दुद्-ऽ जोम्स्
		विमलमित्र	नेम्-म्खऽ-स्क्योङ्
		ज्ञानगर्भ	(लूचे) ज्ञानसिद्धि
			(ह्वशङ्) महायान
			(चिम्) शाक्यप्रभ
			(प-गोर्) वैरोचन-रक्षित
			(थङ्-ति)जयरक्षित
			क्लुऽ-द्वङ्-पो
			(शुद्-पु) श्रीसिंह
			(बे) मंजुश्री
८४७-८७७	(खि) लूदे-(स्रोङ्)-ब्चन्-पो	(अपरांतक) जिनमित्र	(चङ्) देवेंद्र
		सुरेंद्रबोधि	(खङ्) कुसुदिक
		शीलेंद्रबोधि	(ऽखोन्) नागेंद्ररक्षित
		दानशील	लेग्स्-पाऽ-ब्लो-ग्रोस्
		बोधिमित्र	(म-आचार्य) रिन्-छेन्-म्छोग्

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		विद्याकरसिह (० प्रभ)	
		मंजुश्रीवर्म	
		विद्याकरसिद्ध	(बन्-दे) नम्-पर्-मि-तोग्
		धर्मश्रीप्रभ	ग्लङ्-क-तन्
		सर्वज्ञदेव	(ञ्य) खि-ग्जिग्स्
			(बे) ख्य-शेर्
		धर्माकर	सङ्-शि
		शाक्यसिह	(चङ्) लेग्स्-ग्रुब
		सर्वज्ञ देव	छोस्-क्यि-स्नङ्-व
		विद्याकरप्रभ	(स्गो) रिन्-छेन्-स्दे
		बुद्धगुह्य	(बन्-दे) द्पल्-ब्चेग्स्
		शांतिगर्भ	(बन्-दे) कुलुऽि-द्वङ्-पो
		(कश्मीरी)	(शङ्) ग्यल्-ञन्-ञ-
		जिनमित्र	ब्सङ्
			(ल्चे) ख्यि-ऽब्रुग्
			देवचंद्र
			द्पल्-ग्यि-ल्हुन्-पो
			द्पल्-ग्यि-द्ब्यङ्स्
			ब्लोन्-खि-ब्शेड्
			रत्नरक्षित

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च़्-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
			धर्मताशील
			जयरक्षित
			रत्नेंद्रशील
८७७-९०१	(खि) रल्-प-चन्	शाक्यसेन	द्गे-वऽ-द्पल्
		ज्ञानसिद्ध	(बन्-दे) योन्-तन्-द्पल्
		मुनिवर्म	(सून-नम्) ये-शेस्-स्दे
		शाक्यप्रभ	(चोग्-रो) क्लुऽ-र्ग्यल्-म्छन्
		विशुद्धसिंह	धर्मालोक
		प्रज्ञावर्म	क्लुऽ-द्वङ्-पो
			ये-शेस्-द्पल्
			(बन्-दे) नम्-म्खऽ
			ये-शेस्-स्नस्-शुम्
			तोंग्-ऽजिन्
			(शङ्) ये-शेस्
			ये-शेस्-स्ञिङ्-पो
			ये-शेस्-स्दे
			देवेन्द्र
			कुमाररक्षित
९०१-९०२	(ग्लङ्) दर्-म		(ल्ह-लुङ्) द्पल्-र्दो-र्जे

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च़्-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
			तिङ्-ङे-ऽज़िन्-ब्सङ्-पो
			(मर्) रिन्-छेन्-म्छोग्
			(चङ्) रब्-ग्सल्
			(ग्यो) द्गे-ऽब्युङ्
			(स्तोद्-लुङ्-स्मर्) शाक्यमुने
			ख्यि-र-ब्येद्-प

दीपंकर-युग (१०४२-११०२)

१०००	ये-शेस्-ऽोद्	श्रद्धाकरवर्म	रिन्-छेन्-ब्सङ्-पो (९५८-१०५५)
		जनार्दन	लेग्स्-पऽि-शेस्-रब्
		पद्माकरगुप्त (० वर्म)	द्पल्-ऽब्योर्
		सुभाषित	(शिङ्-मो-छे) ब्यङ्-छुब्-सेङ्-गे
		बुद्धश्रीशांति	द्गे-वऽि-ब्लो-ग्रोस्
		बुद्धपाल	(ग्यि-चो) स-वइ-ऽोद्-सेर् (१०२७) ल
		कमलगुप्त	(स्म्रो) शेस्-रब्-ग्रग्स्
		करुणा (ज्ञान)	
		श्रीभद्र	शाक्य-ब्लो-ग्रोस्

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		सोमनाथ (कश्मीरी) (१०२७)	(लोग्-सक्य) शेस्-रब्-बर्चे ग्स्
		धर्मपाल	(मल्-ग्यो) ब्लो-ग्रोस् ग्रग्स्-प
		कनकश्रीमित्र	ग्शोन्-ग्रग्स्
		प्रज्ञापाल	द्गे-वइ-लेग्स्-प
		कुमारकलश	छुल्-ख्रिम्स्-योन्-तन्
		धर्मश्रीवर्म	(ऽब्रोग्-मि) शाक्य-ये-शेस् (मृत्यु १०७२)
		प्रेतक	
		स्मृतिज्ञानकीर्ति	
		सूक्ष्मदीर्घ	
		पद्मरुचि	
		गंगाधर	
		धर्मश्रीभद्र	
		गयाधर	
	ल्ह-ल्दे (राजा)	सुभाषित	
	ऽोद-ल्दे (राजा)	सुनयश्री	(डन्) दर्-म-ग्रग्स्

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		मति	(शङ्-दु्कऽ) ऽफग्स्-पऽि-शेस्-रब्
		आरण्यक (कश्मीरी)	
		तेजोदेव	
		परिहितभद्र	
१०४२	व्यङ्-छुब्-ऽोद	दीपकरश्रीज्ञान	रिन्-छेन्-ब्सङ्-पो
		महाजन	ग्शोन्-नु-म्छोग्
		कुमारकलश	(नग्-छो) छुल-खिम्स्-र्ग्यल्-व
		कृष्णपडित	(से-र्च) ब्सोद्-नम्स्-र्ग्यल्
		शांतिभद्र (नेपाली)	(र्ग्य-) व्चोन्-ऽग्रुस्-सेङ्-गे (मृत्यु १०४१)
		आनद (कश्मीरी)	(ऽब्रग्-ऽब्योर्) शेस्-रब्-ऽबर
		श्रीरथ (कश्मीरी)	छोस-ब्सङ्
		अनन	(ऽब्रो-सेङ्-दुकर्) शाक्य-ऽोद
		देवेंद्र	(ऽगोस्-खुग्-प) ल्हस्-व्चस्

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		चंद्रकुमार	(ग्यि-चो) स-वङि-ऽोद्-सेर् ल
		विनायक	(योल्-चोग्) दों-र्जे-द्वङ्-फ्युग्
		अजितश्रीभद्र	शाक्य-ये-शेस्
		अनंतश्री (नेपाली)	दगे-वङि-ब्लो-ग्रोस
		कुमारश्रीमित्र	
		गयाधर	
		रुद्र	
		बुद्धशांति	
		सुभूतिश्री (शांति)	
		भव्यराज (कश्मीरी)	
	शि-व-ऽोद	सुजनश्रीज्ञान	शि-व ऽोद
		गुणाकरश्रीभद्र	(ऽब्रो-सेङ्-दूकर्) शाक्य-ऽोद
		मंत्रकलश	(शग्-शुङ्) व्यङ्-छुब्-शेस्-रब्
		दीपकररक्षित	
१०७६	चें-ल्हे (राजा)	ज्ञानश्री	(ल स्तोद-मं) छोस्-ऽवर् (१०४३-८६)

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पडित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		तिलकलश	(ङोग्) ब्लो-ल्दन्-शेस्-रब (१०५९-११०८)
		सुमतिकीर्ति	(ख्यङ्-पो) छोस्-ब्चोन्
		चंद्रराहुल	(चोग-ग्रु) तिङ्-ङे-ऽज़िन्-ब्सङ्-पो
		अतुलदास	(र्ग्युस्) समोन्-लम्-ग्रग्स्
		मनोरथ (कश्मीरी)	
		परहितभद्र	
		ज्ञानश्रीमित्र	
		भव्यराज (कश्मीरी)	
		सुभूतिघोप	
	द्वङ्-ल्दे (राजा)	भव्यराज (कश्मीरी)	(ङोग्) ब्लो-ल्दन्-शेस्-रब (१०५९-११०८)
	ब्क्र-शिस्-ल्दे-द्वङ्-फ्युग् (राजा)	तिलकलश	(मर्-प) छोस्-क्यि-द्वङ्-फ्युग-ग्रग्स्
		स्थिरपाल	(ऽब्रोग-मि) शाक्य-ये-शेस्
		कनकवर्म (कश्मीरी)	रिन्-छेन-ब्सङ्-पो (९५८-१०५५)

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च्-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		जयानंत	(श-म) सेड्-गे-र्ग्यल्
		अतुलदास	(क्लोग्-स्क्य) ग्शोन्-नु-ऽवर
		सुमतिकीति	(स्त्र-ब्स्ग्युर) दद्-पऽि-शेस्-रब्
		अमरचंद्र	(मर्-प) छोस्-क्यि-ब्लो-ग्रोस्
		कुमारकलश	(प-छब्) त्रि-म-ग्रग्स् (जन्म १०५५)
		धर्मश्रीभद्र	
		बुद्धश्रीशांति	
		नाडपाद (नारोपा मृत्यु १०४०)	
		मैत्रीपाद	
		शांतिभद्र	

स-स्क्य-युग (११०२-१३७६)

११०२-१११९ (स-स्क्य) व-रि-लो-च्-व		मंजुश्री	व-रि-लो-च्-व
		अभयाकरगुप्त (मृत्यु ११२५)	(वन्-दे) शेस्-रब्-द्पल्

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च-व (दुभापिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		वज्रपाणि (१०६६)	(ग्दब्-ऽखोर्) ब्लो-ग्रग्स्
		बुद्धाकरवर्म	(खे-ग्द्) ऽखोर्-लो-ग्रग्स्
		कृष्ण	(ग्नुब्) धर्म-ग्रग्स्
		फ-दम्-प (मृत्यु १११८)	(स्पोङ्-जो) ग्सल्-व-ग्रग्स्
		विनयचंद्र	छोस्-क्यि-शेस्-रब् (चोङ्-ख-मि-ञग्) च-मि सङ्स्-र्ग्यस्-ग्रग्स् (ब्क्रो-वो) शेस्-रब्-द्पल् (जन्म १०५६) थोस्-प-द्गऽ (मे-ब्न्) छोस्-ऽबर् (म-छुर्) ये-शेस्- ऽब्युङ्-ग्नस्
११११-५८	(स-स्क्य) कुन्-द्गऽ-स्ञिङ्-पो	अलकदेव	(स्तेङ्-प) छुल्-ख्रिम्स्-ऽब्युङ्-ग्नस् (११०६-६०)
		महाकारुणिक	(बें) दों-र्जे-ग्रग्स्

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		शून्यतासमाधि	(दूप्यल्)-कुन्-दूगऽ-दों-जें
		अमोघवज्र	(दङ्-दु) दूकर्-पो
		समतश्री	फुर्-वु-ऽोद्
			(फग्-रि) रिन्-छेन्-ग्र_ग्स
			(र्बे) छोस्-रब्
			(शङ्) शेस्-रब्-ब्ल-म
			(मृत्यु ११७७)
११८२-१२१६	(स-स्क्य) ग्रग्स्-प-र्ग्यल्-म्छन	सर्वज्ञश्री	ग्रग्स्-प-र्ग्यल्-म्छन्
		अनतश्री (सिहल)	(र्म) लो-च-व (जन्म ११६०)
		धर्मधर	ब्यङ्-छुब्-ऽबुम्
		कीर्तिचद्र	(शङ्) लो-च-व (जन्म ११७७)
		जगन्मित्रानन्द (मित्रपा, ११६८)	(यर्-लुङ्) ग्रग्स्-प-र्ग्यल्-म्छन्
		लक्ष्मीकर	(ग्नुबस्) छुल्-खिम्स्-शेस्-रब्

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
			(शोङ्-सतोन्) दों-र्जे-ग्यल्-म्छन्
			(ख्रो-फु) व्यमस्-पडि-दूपल् (जन्म ११७३)
१२१६-५१	(स-स्क्य) कुन्-दगऽ-ग्यल्-म्छन्	वुद्धश्रीज्ञान (१२००)	(चल्) छोस्-ब्सङ्-पो
		शाक्यश्रीभद्र (११२७-१२२५) (१२०१)	(व्य-युल्) लो-च-व
		विभूतिचंद्र (१२०४) (जगत्तल)	(रोङ्-ग्य) नम्-ग्यल्-दों-र्जे
		दानशील (१२०४)	(बें) दों-र्जे-दूपल्
		संघश्री (नेपाली, १२०४)	(छग्) द्र-ब्चोम्-र्ते-ऽु (११५३-१२१६)
		सुगतश्री (१२०४)	.छुल्-ख्रिमस्-ग्यल्-म्छन्
		विनयश्री	.छुल्-ख्रिमस्-सेङ्-गे

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पण्डित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		धर्मधर	(स्पङ्स्) अगस्-प ग्यल्-म्छन्
		रत्नश्री	
		वज्रासनपाद	
		निष्कलंक	
१२५१-८०	(स-स्क्य) ऽफग्स्-प	सुधनरक्षित	(श्व-मर्) सेङ्-ग्येल्
		मणिभद्ररक्षित	(य-ग्रोग्-ग्यि-मर्-प) छोस्-क्यि-द्वङ्-पो
		लक्ष्मीश्री (नेपाली)	(छग्) छोस्-र्जे-द्पल् (मृत्यु १२६५)
		लक्ष्मीकर	देवेंद्र
			रत्नरक्षित
			(शोङ्-स्तोन्) दों-र्जे-ग्यल्-म्छन्
			ब्लो-ग्रोस्-र्तन्-प
१२८०-८८	(स-स्क्य) धर्मपालरक्षित		(स्तग्) शाक्य-ब्सङ्-पो (जन्म १२६२)।
			(मि-व्यग्) लो-च-व (मृत्यु १२८२)

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
१२९०-१३६४	(बु-स्तोन्) रिन्-छेन्-ग्रुब	कीर्तिचंद्र	(शेल्-द्कर्) ब्यङ्-छुब्-र्चे-मो-ब्लो-ब्र्तन्-द्पोन्-पो (१३०३-८०)
		धर्मश्रीभद्र(?)	(जो-नङ्) शेर्-ग्येन् (मृत्यु १३६१)
		धर्मधर	छोस्-र्जे-द्पल्
		सुमनश्री (कश्मीर)	न्यि-म-ग्यल्-म्छन्-द्पल-ब्सङ्-पो
		मणिकश्री	(स्पङ्स्) ब्लो-ग्रोस्-ब्र्तन्-प
			(स्प्यल्) छोस्-क्यि-ब्सङ्-पो
			(बु-स्तोन्) रिन्-छेन्-ग्रुब

चोङ्-ख-प-युग (१३७६-१६६४)

१३५७-१४१९	(चोङ्-ख-प) ब्लो-ब्सङ्-ग्रग्स्-प	वनरत्न (१३८४-१४६८)	(ऽगोस्) यिद्-ब्सङ्-चे (जन्म १३९२) ग्शोन्-नु-द्पल्

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च्-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
			(सूतग्) शेस्-रब्-रिन्-छेन् (जन्म १४०५)
			शेस् रब्-ग्यंल् (जन्म १४२३)
१५२७-७६	(श-लु) धर्मपालभद्र		(श-लु) रिन्-छेन् ब्सङ् (१४८६-१५६३)
			रिन्-छेन् बक्र-शिस्-द्पल्-ब्सङ् (१५७६)
			(सूतग्-लुङ्) कुन्-बक्र (१५५५)
१५७५ जन्म	(ग्यंल्-खम्स्) कुन्-द्गऽ स्निङ्-पो (लामा तारानाथ)	कृष्णभट्ट	तारानाथ
१६१७-८२	(दलाईलामा) ब्लो-ब्सङ्-ग्यं- म्छो*	बलभद्र (कुरुक्षेत्र)	फुन्-छोग्-ल्हुन्-ग्रुब (१६६४)

*लो-च्-व और पंडितको एक पंक्तिमें रखनेमें कालका ध्यान नहीं रक्खा गया है। कुछ को छोड़कर बाकी पंडित स्वयं तिब्बतमें गए थे।

समय	आश्रयदाता या प्रधान व्यक्ति	भारतीय पंडित	लो-च-व (दुभाषिया) या प्रधान धार्मिक नेता
		गोकुलनाथमिश्र	
		कृष्ण	
		(कुरुक्षेत्र)	
		गौतमभारती	
		ओंकारभारती	
		उत्तमगिरि	

—:※:—

७

९—तिब्बतमें भारतीय ग्रंथोंके कुछ प्रधान अनुवादक, उनके सहायक और ग्रंथ

काल	अनुवादक	सहायक, या सम-सामयिक	अनुवादित ग्रथ	ग्रथकर्त्ता
		शांतरक्षित-युग (८२३-१०४२)		
७७५	शांतरक्षित	धर्मालोक	हेतुचक्र	दिङ्-नाग
७७५	पद्मसभव	वैरोचन	वज्रमत्रसग्रह	
		द्पल्-ग्यि-सेङ्-गे	डाकिनीजिह्वा-जालतत्र	
	विमलमित्र	(बन्-दे) ज्ञानकुमार	वज्रसत्त्वमायाजाल-गुह्यसर्वादर्शतत्र	
		नम्-म्खऽ-स्क्योङ्	सप्तशतिका प्रज्ञा-पार-मिता-टीका	कमलशील
		रिन्-छेन्-स्दे	प्रज्ञापारमिता-हृदयटीका	विमलमित्र
	सुरेंद्राकरप्रभ (ली-वासी)	नम्-म्खऽ-स्क्योङ्	प्रतीत्यसमुत्पाद-व्याख्या	वसुबधु

काल	अनुवादक	सहायक, या सम-सामयिक	अनुवादित ग्रंथ	ग्रंथकर्ता
		शील धर्म (ली) ?		
	ज्ञानगर्भ	नम्-मूखऽ-स्क्योङ्	सबध-परीक्षा	धर्मकीर्ति
८१४	जिनमित्र	सुरेंद्रबोधि	शतसाहस्रिका-प्रज्ञापारमिता	
		प्रज्ञावर्म	दशसाहस्रिकाप्रज्ञा-पारमिता	
		दानशील		
		मुनिवर्म	तथागताऽचित्य-गुह्यनिर्देश	
		शीलेंद्रबोधि		
		ज्ञानगर्भ		
		शाक्यप्रभ		
		शाक्यसेन		
		धर्मपाल	ब्रह्मविशेषचिंता-परिपृच्छा-सूत्र	
		ज्ञानसिद्ध		
		मंजुश्रीवर्म		
		रत्नेंद्रशील		
		ये-शेस्-स्दे	युक्तिषष्टिका-वृत्ति	चंद्रकीर्ति
		”	न्याय-बिंदु-टीका	विनीतदेव

काल	अनुवादक	सहायक, या समसामयिक	अनुवादित ग्रंथ	ग्रन्थकर्ता
		दानशील	बुद्धाऽनुस्मृति-टीका	वसुबधु
		प्रज्ञावर्म	हेतुविंदु	धर्मकीर्ति
		ज्ञानगर्भ	भद्रचर्याप्रणिधान-टीका	अलकार-भद्र
		सर्वज्ञदेव	स्खलितप्रमर्दन	आर्यदेव
		,,	बोधिचर्यावतार	शांतिदेव
		धर्माकर	विनयप्रश्न-कारिका	कल्याण-मित्र
		शीलेंद्रबोधि	महावैरोचनाऽभि-सबोधि-सूत्र	
		प्रज्ञाकरवर्मा	हेतुविदु-टीका	विनीतदेव
		विद्याप्रभाकर (?)		
		शुद्धसिद्ध	रत्नचंद्रपरिपृच्छा	
		द्पल्-ग्यि-ल्हुन्-पो	द्रुमकिन्नरराज-परिपृच्छा	
		ये-शेस्-स्ञिङ्-पो	रत्नजाति-परिपृच्छा	
		ब्सङ्-स्क्योङ्	सूर्यगर्भमहावैपुल्य-सूत्र	
		द्पल्-द्ब्यङ्-स्*	भद्रकल्पिक-सूत्र	
		रिन्-छेन्-म्छोग्*	उदानवर्ग	

काल	अनुवादक	सहायक, या सम-सामयिक	अनुवादित ग्रंथ	ग्रंथकर्ता
	(चोग्-रु)-क्लुइ-ग्र्यल्-म्छन	विशुद्धसिंह		
		ज्ञानगर्भ	मूलमध्यमक-कारिका	नागार्जुन
		प्रज्ञावर्म (०गर्भ)	मूलमध्यमक-वृत्ति	बुद्धपालित
		सर्वज्ञदेव (कश्मीरी)	,,	भाव्य (भावविवेक)
		जिनमित्र (मूल सर्वास्ति वादी)	प्रातिमोक्ष-सूत्र-टीका	
		,,	विनयविभंग-टीका	विनीतदेव
		,,	विनय सूत्र-टीका	धर्ममित्र
		(चंडस्) देवेन्द्ररक्षित		

दीपंकर-युग (१०४२-११०२)

९५८-१०५४	रिन्-छेन्-ब्सङ्-पो	सुभाषित	अष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता	
		दीपंकरश्रीज्ञान	त्रिशरणसप्ततिका	चंद्रकीर्ति
		कमलगुप्त	विमलप्रश्नोत्तर रत्नमाला	अमोघवर्ष (राजा)

काल	अनुवादक	सहायक, या सम-सामयिक	अनुवादित ग्रंथ	ग्रंथकर्ता
		धर्मश्रीभद्र	ध्यान षड्-धर्म-व्यव-स्थान-वृत्ति दान-शील	
		पद्माकरश्रीज्ञान	अभिधानोत्तर-तंत्र	
		श्रद्धाकरवर्मा	हस्तवालप्रकरण	आर्यदेव
		पद्माकरवर्मा	परमार्थ बोधि चित्तभावना	अश्वघोष
		शुभशांति	अभिसमयालंकारा-लोक	हरिभद्र
		जनार्दन	अष्टांगहृदय-संहिता	नागार्जुन
		गंगाधर	सप्तगुणपरिवर्णनकथा	वसुबंधु
		बुद्धभद्र	चतुर्विपर्ययकथा	मति-चित्र (मातृचेट)
		बुद्धश्रीशांति	अश्वायुर्वेद	शालिहोत्र
		छुल्-खिम्स्-योन्-तन् ब्लो ल्दन्-शेस्-रब्	सुमागधावदान	
९८२-१०५४	दीपंकर-श्रीज्ञान	रिन्-छेन्-ब्सङ्-पो	त्रिशरणसप्ततिका	चंद्रकीर्ति
		द्गे-ब्डि-ब्लो-ग्रोस्	बोधिपथप्रदीप	दीपंकर-श्रीज्ञान

काल	अनुवादक	सहायक, या समसामयिक	अनुवादित ग्रंथ	ग्रंथकर्ता
		शाक्य-ब्लो-ग्रोस्	समाधिसवर-परिवर्त	दीपकर श्रीज्ञान
		ऽग्रोम्-स्तोन्	विमलरश्मिविशुद्ध-प्रभाधारणी	
		(ग्यें) ब्चोन-ग्रुस्-सेङ्-गे	मध्यमकरत्नप्रदीप	भाव्य (भाव-विवेक)
		(नग्-छो) छुल्-ख्रिम्स्-ग्यल्-व	मध्यमक-हृदय	,,
		,,	मध्यमक वृत्ति	,,
		ग्शोन्-नु-मछोग्		
		शेस्-रब्-ग्रग्स्		
	द्गे-वऽि-ब्लो-ग्रोस्	बुद्धशांति		
		सुभूतिश्रीशांति		
		करुणा (ज्ञान)-श्रीभद्र		
		श्री कुमार	बोधिसत्वचर्यावतार-संस्कार	कल्याणदेव

काल	अनुवादक	सहायक, या सम-साम यक	अनुवादित ग्रन्थ	ग्रथकर्ता
		दीपंकरश्रीज्ञान	अवलोकितेश्वर-परिपृच्छा-सप्तधमक	
१०२७	सोमनाथ	शेस्-रब्-ग्रग्स्	कालचक्रतंत्र	
१०७४	(ऽब्रोग्-मि)	गयाधर	सपुटीतंत्र	
-मृत्यु	शाक्य-ये-शेस्			
		अमोघवज्र		
		प्रज्ञागुह्य		
	गयाधर	(ग्यिं-जो) स-वङ्-ऽोद्-सेर्	बुद्धकपाल-योगिनी-तंत्र	
		त		
		(ऽगोस्-खुग्-प) ल्ह-व्चस्	वज्रडाकतंत्र	
		(ऽब्रोग्-मि) शाक्य-ये शेस्	हेवज्रतंत्रराज	
	शि व-ऽोद्	सुजनश्रीज्ञान		
		मंत्रकलश	परमादिमहायान-कल्पराज	
		गुणाकरभद्र		

काल	अनुवादक	सहायक, या समसामयिक	अनुवादित ग्रंथ	ग्रन्थकर्ता
११०९ (डोंग्) मृत्यु	ब्लो-ल्दन् शेस्-रब्	अमरगोमी	अभिसमयालकारवृत्ति	प्रज्ञाकरमति
		दीपकरश्रीज्ञान	अभिसमयालकारालोक[1]	हरिभद्र
		मनोरथ कुमारश्रीभद्र	अपोहसिद्धि	शकरानद (ब्राह्मण)
		तिलकलश	भद्रचर्याप्रणिधानव्याख्या	नागार्जुन
		सुमतिकीर्ति	बोधिचित्तोत्पादसमादानविधि	जेतारि
		अतुलदास शांतिभद्र	त्रिसवरक्रम	(अनाविलवज्र)
		महाजन (कश्मीरी)	धर्मधर्मताविभगवृत्ति	वसुबधु
		सज्जन	महायानोत्तरतत्रव्याख्या	असंग
		मजुश्रीवर्म	अमोघपाशषट्पारमिताधारणी	
		भव्यराज	अपोहप्रकरण	धर्मोत्तर

काल	अनुवादक	सहायक, या समसामयिक	अनुवादित ग्रंथ	ग्रन्थकर्ता
		परहितभद्र	न्यायबिंदु	धर्मकीर्ति
		,,	प्रमाणविनिश्चय	,,
१०५५ जन्म	(प-छ्ब्) ञि-म-ग्रग्स्	पुण्यसंभव	अपरिमितायुर्ज्ञान-हृदयधारणी	
		मुदितश्री	युक्तिषष्ठिका-कारिका	नागार्जुन
		सूक्ष्मज्ञान	चतुःशतकशास्त्र	आर्यदेव
		तिलकलश	मध्यमकावतारभाष्य	चद्रकीर्ति
		कनकवर्म	अभिधर्मकोश-टीका (लक्षणानुसारिणी,	(पूर्णवर्द्धन)
		हसुमति	मूलमध्यमकवृत्ति (प्रसन्नपदा)	चद्रकीर्ति
		अजितश्रीभद्र	अष्टाक्षणकथा	अश्वघोष
	(ऽञो-सेड्-दूकर्) शाक्य-ऽोद्	शांतिभद्र (नेपाली)	विज्ञप्तिमात्रता-सिद्धि	रत्नाकर-शांति
		कुमारकलश	मध्यमकालंकारवृत्ति	,,
		चद्रकुमार	महायानविंशिका	नागार्जुन

काल	अनुवादक	सहायक, या समसामयिक	अनुवादित ग्रंथ	ग्रंथकर्ता
		रुद्र	सुभाषितरत्नकरण्ड	(महाकवि) हर्ष
		अनतश्री (नेपाली)	कार्यकारणभाव-सिद्धि	ज्ञानश्रीमित्र
		छोस्-क्यि-शेस्-रब् (मर्-प)		
		छोस् क्यि-द्बङ्-फ्युग्		

स-स्क्य-युग (११०२-१३७६)

११०६-६०	छुल्-ख्रिम्-स्ऽब्युङ्-ग्नस्	अलकदेव	विनयसूत्रव्याख्या	प्रज्ञाकर
		,,	जातकमाला	हरिभद्र
११८२-१२१०	(यर्-लुङ्-प) ग्रग्स्-प-र्ग्यल्-मछन्	धर्मधर	प्रतिमामानलक्षण	आत्रेय
		कीर्तिचद्र	लोकानदनाटक	चद्रगोमी
		,,	अमरकोष	अमरसिंह
		,,	,, टीका (कामधेनु)	सुभूतिचंद्र

काल	अनुवादक	सहायक, या समसामयिक	अनुवादित ग्रंथ	ग्रंथकर्ता
११७३ जन्म	(खो-फु) ब्यम्स्-पऽि-दूपल्	जगन्मित्रानंद (मित्र योगी)	चतुरंगधर्मचर्या	जगन्मित्रानंद
		शाक्यश्रीभद्र	महायानोपदेशगाथा	शाक्यश्रीभद्र
११२२-१२२५	शाक्यश्रीभद्र	(खो-फु) ब्यम्स् पऽि-दूपल्	सप्तागधर्मचर्यावतार	शाक्यश्रीभद्र
		दूम्र-ब्चोम्	बोधिचित्तसंवरग्रहणविधि	अभयाकर
		कुन्-दूगऽ-र्ग्यल्-म्छन	प्रमाणवार्तिककारिका	धर्मकीर्ति
	(शङ्-स्तोन्) दों-र्जे-र्ग्यल्-म्छन्	लक्ष्मीकर	नागानंदनाटक	श्रीहर्षदेव
		”	बोधिसत्त्वावदानकल्पलता	क्षेमेंद्र (महाकवि)
		”	काव्यादर्श	दंडी
१२९०-१३६४	(बु-स्तोन्) रिन्-छेन्-ग्रुब्		(कलाप) धातुकाय	दुर्गसिंह
			त्याद्यतप्रक्रिया	हर्षकीर्ति

काल	अनुवादक	सहायक, या समसामयिक	अनुवादित ग्रन्थ	ग्रन्थकर्ता
		सुमनश्री	नवश्लोकी	कंबल
		,,	ऊर्ध्वजटाऽनुत्तरतंत्र[1]	
१३०१-८०	व्यङ्-छुब् च-मो	सुमनश्री (कश्मीरी)	मेघदूत	कालिदास
	(ब्लोर्तन्-द्पोन्-पा)		अभिधर्मसमुच्चय-टीका	

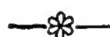
चोङ्-ख-प-युग (१३७६-१६६४)

काल	अनुवादक	सहायक, या समसामयिक	अनुवादित ग्रन्थ	ग्रन्थकर्ता
१३८४-१४६८	वनरत्न	(ऽगोस्) थिद्-बसङ्-चे-ग्शोन्नु-द्पेल् (जन्म १३९२)		
		(स्तग्) शेस्-रब्-रिन्-छेन् (जन्म १४०५)		
		शेस्-रब् ग्यंल् (जन्म १४२३)		
	(श-लु) धर्मपालभद्र जन्म १५२७		अभिधर्मकोशटीका	स्थिरमति
			कालचक्रगणित	
			ईश्वरकर्तृत्वनिराकृति	नागार्जुन

काल	अनुवादक	सहायक, या समसामयिक	अनुवादित ग्रन्थ	ग्रन्थकर्ता
			मंजुश्रीशब्दलक्षण	भव्यकीर्ति
			,, वृत्ति	देव (कलिंगराज)
	(ग्यल्-खम्स्-प) कुन्-दुगऽ-स्ञिङ्-पो (तारानाथ) जन्म १५७५	कृष्णभट्ट (कुरुक्षेत्र)	सारस्वतव्याकरण	अनुभूतिस्वरूपाचार्य

अंतिम युग (१६६४-···)

१६६५	फुन्-छोग्-ल्हुन्-ग्रुब्[1]	गोकुलनाथमिश्र (कुरुक्षेत्र)	प्रक्रियाकौमुदी (१६५८)	रामचद्र
		बलभद्र	सारस्वतव्याकरण (१६६५)	अनुभूतिस्वरूपाचार्य
		गौतमभारती, ओंकारभारती, उत्तमगिरि	आयुर्वेदसारसमुच्चय (१६६४)	



[1]यह सूची पूर्ण नहीं है। इसमें सिर्फ समकालीन अनुवादकोंको दिखलानेका प्रयत्न किया गया है। तेरहवें दलाई लामा मुनि शासन सागरका देहांत १८ दिसंबर १९३३ (अगहन की अमावस्या)को ल्हासा-में हुआ।

(सपु-रङ-स्)　(शङ्-रा-ङ्)

न

[1]स्रोङ्-बृचन्-

[1]गुङ्-स्रोङ्-गङ्-वचन्

[1]ऽजद्-ञ्-ल्हे-द्पोन्

[1]मु-खि-बृचन्-पो　[1]मु-तिग-वत्तन-पो

[3]दूडोंस-ग्रव (१२६०-

तिब्बतमें बौद्ध धर्म

राहुल सांकृत्यायन

तिब्बतमें बौद्ध धर्मका इतिहास बृहत्तर भारत भारतीय संस्कृतिके प्रसारका इतिहास है। किस त शिक्षा और संस्कृति विहीना घुमन्तू जाति भारतीय संस्कृतिके दूत पहुँचे, किस तरह उन 'भोट' जातिमें, साहित्य, कला, और दर्शनका प्रच किया और किस तरह वहाँकी सारी इतिहास-धार नवजीवनका संचार किया। "तिब्बतमें बौद्ध धम यद्यपि बड़ा ग्रंथ नहीं है, किन्तु यह दुनियाके कि भाषामें भी पहला ग्रंथ है, जिसमें तिब्बतमें बौ धर्मका श्रृंखलाबद्ध प्रामाणिक इतिहास लिखा गया है

मूल्य १)

किताब महल * प्रकाशक * इलाहाबाद

केवल कवर जाब प्रिन्टर्स, इलाहाबाद में छपा।